।। ओ३म् ।।

आर्य नेताओं के व्याख्यान

(श्रीमद्दयानन्द जन्म शताब्दी मथुरा में)

१८ आर्य संन्यासियों, महात्माओं, नेताओं और विद्वानों के
सार गर्भित भाषणों का संग्रह

आर्य समाज सी-ब्लाक जनकपुरी
द्वारा
वेद प्रचार वर्ष ([illegible] 100[illegible])
के [illegible]
मूल्य पर 50 प्रतिशत [illegible]

प्रकाशक –

सरस्वती साहित्य संस्था

२९५, जागृति इन्क्लेव, विकास मार्ग, दिल्ली-९२,

दूरभाष : २१५२४३५

आर्य नेताओं के व्याख्यान

१ मई १९९८

मूल्य – आठ रूपये

आर्य समाज पंखा रोड सी-ब्लाक
सी-3 पार्क, जनक पुरी, नई दिल्ली-58
द्वारा
वेद प्रचार पर्व (..........)
के पुनीत अवसर पर स्वाध्याय हेतु
मुद्रित मूल्य पर 50 प्रतिशत अनुदान

श्री रवीन्द्र कुमार मेहता, अध्यक्ष सरस्वती साहित्य संस्था द्वारा पराशर प्रिन्टर्स, दिल्ली से मुद्रित

लेजर टाईप सेटिंग – कौशिक कम्प्यूटर दिल्ली

प्रकाशकीय

आज से ७५ वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द सरस्वती की शिक्षा-दीक्षा स्थली मथुरा नगरी में लाखों आर्य नर-नारियों ने अत्यन्त श्रद्धा उत्साह और उमंग से महर्षि की जन्म शताब्दी मनाई थी। ये वो स्वर्ण युग था जब महर्षि दयानन्द द्वारा दीक्षित अनेकानेक सन्यासी विद्वान, नेता और नरेश उस सम्मेलन में सम्मिलित होकर महर्षि के चरणों में श्रद्धांजलि प्रस्तुत कर रहे थे।

ऐसे अवसर पर लगातार तीन दिन तक अठारह महान नेताओं के अत्यन्त महत्वपूर्ण भाषण हुए थे। इन भाषणों की उस समय आर्य जनता को जितनी आवश्यकता थी, उतनी ही—नहीं नहीं उससे भी अधिक आज भी आवश्यकता है। इसी भाव से प्रेरित होकर हमने उन अठारह भाषणों तथा अन्य १३ राजा महाराजा एवं विद्वानों के वचनों को इस पुस्तक द्वारा प्रकाशित करके आर्य जगत की सेवा में प्रस्तुत किया है।

आशा है आर्य जगत हमारे इस प्रयास से लाभान्वित होगा। हमने इस पुस्तक का मूल्य केवल लागत मात्र रखा है। हमारी अन्य पुस्तकें जो लागत मात्र मूल्य की हैं, आप महानुभाव उनका भी लाभ उठायेंगे।

— प्रकाशक

१ मई, १९९८

व्याख्याता सूची

१.	श्री महात्मा स्वामी जी का व्याख्यान	५-७
२.	श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का वेदोपदेश	७-८
३.	श्री स्वामी अच्यूतानन्द जी का वेदोपदेश	८-११
४.	श्री स्वामी गंगागिरि जी का भाषण	११-१२
५.	श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी का व्याख्यान	१२-१४
६.	श्री स्वामी सत्यानन्द जी का धर्मोपदेश	१४-१५
७.	श्री स्वामी स्वतंत्रतानन्द जी का धर्मोपदेश	१६
८.	श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार का भाषण	१६-२२
६.	श्री कुंवर चांदकरण जी शारदा का भाषण	२२-२८
१०.	श्री पं० भगवद्दत् जी **B.A.** का व्याख्यान	२८-२६
११.	श्री पं० अयोध्या प्रसाद जी का व्याख्यान	३०-३१
१२.	श्री प्रि० बालकृष्ण जी का भाषण	३१-३२
१३.	श्री डा० केशवदेव जी शास्त्री का व्याख्यान	३२-३४
१४.	प्रि० श्री दीवानचन्द जी का भाषण	३४-३७
१५.	श्री भाई परमानन्द जी का व्याख्यान	३७-४०
१६.	श्री महात्मा हंसराज जी का भाषण	४०-४३
१७.	श्री पं० चमूपति जी का व्याख्यान	४३-४७
१८.	श्रीमती डा० दमयन्ति देवी जी का व्याख्यान	४८-४६

स्वामी जी के समकालीन पुरुषों के दर्शन और भाषण

१.	राजाधिराज श्री सर नाहरसिंह जी वर्मा का आर्यकुमार सम्मेलन में भाषण	५०-५१
२.	शाहपुराधीश राजाधिराज सर नाहरसिंह जी के दर्शन-भाषण	
३.	रावराजा तेज सिंह जी (जोधपुर)	५२-५३
४.	श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज	५३-५४
५.	श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी	५४-५४
६.	श्री स्वामी अच्यूत्यानन्द जी, ७. श्री पंडित आर्य मुनि जी, ८. रायसाहिब श्री हरविलास जी शारदा, ६. श्री लाला देवराज जी, १०. श्री लाला लक्ष्मणानन्द जी, ११. महात्मा श्री अलखधारी जी, १२. महात्मा श्री गणेश प्रसाद जी, १३. श्री लाला गंगाराम जी (लाहौर)	५६

।। ओ३म् ।।

श्री महात्मा नारायण स्वामीजी का व्याख्यान

मुझे प्रसन्नता है कि आप लोग प्रेम सूत्र में बंधे हुए यहां पर शताब्दी मना रहे हैं। क्या आपको स्वामी जी के कार्यारम्भ करने से पहले भारत की दशा का पता है? योरोप के लोग हिन्दुओं को ईसाई बनाने की चेष्टा करते थे। सन् १६१६ ई. के लगभग एक पोर्चगीज़ पादरी आया था। वह ईसाइयत के प्रचार करने के अभिप्राय से आया था। यदि तब लोगों के अन्तःकरणों में वेदों के प्रति श्रद्धा एवं प्रेम होता तो संभव नहीं था कि वह अपने कार्य में सफलीभूत होता। उसने एक यजुर्वेद नामक पुस्तक बनाई और ब्रह्मचारी के वेष में प्रचार करना आरम्भ कर दिया। चूंकि लोग वेद की महिमा से अनभिज्ञ थे इस कारण उसे इस प्रकार से सहज ही में सफलता प्राप्त हो गई। लोग वेद के नाम पर अन्धे हो गये। ५०० आदमी बदलकर ईसाई बनाये गये और बाद में इनकी सख्या उत्तरोत्तर बढ़ती गई। ईसाई लोग कई प्रकार से उन्नति करते रहे हैं। हिन्दू स्त्रियां ईसाइयों के पास जाती थीं और उन्हें नवजात बालक अर्पण करने की उनसे प्रतिज्ञा कर आती थीं। दयानन्द की शिक्षा ने ज़मानें की लहर को पलट दिया।

स्वामी दयानन्द ने बतलाया कि धर्म और विज्ञान एक दूसरे के विरोधी नहीं प्रत्युत सहायक हैं। इनमें "किस प्रकार" और "क्यों" का मार्ग है। साइंस "किस प्रकार?" का उत्तर देती है और धर्म "क्यों" का उत्तर देता है । जब तक ये दोनों न मिलें इन प्रश्नो का उत्तर देना असंभव है। दयानन्द ने समस्त योरोप में यह आंदोलन चलाया कि विज्ञान और धर्म भिन्न वस्तुएं नहीं हैं।

एक धार्मिक कान्फ्रेन्स में प्रश्न उपस्थित किया गया और एक लेख पढ़ा गया जिसका आशय यह था कि ऐसा धर्म या मत वान्छनीय है जो ईश्वर और मनुष्य के बीच सीधा सम्बन्ध कराये और मार्फ़त की आवश्यकता न पड़े। हारवर्ड यूनिवर्सिटी के चैन्सलर ने कहा कि समस्त मतों में एक ऐसे व्यक्ति की सत्ता है जो ईश्वर और मनुष्य के बीच होती

है। दयानन्द ने यह बतलाया है कि आत्मा का परमात्मा के साथ सीधा सम्बन्ध होना चाहिये। यही वेदों में लिखा है। बाहर से अन्दर आओ न कि अन्दर से बाहर जाओ। नारहोन ने जोकि अमेरिका का एक बड़ा दार्शनिक था नित्यप्रति प्रातःकाल उठकर कहा करता था, "मैं गीतारूपी नदी में प्रतिदिन स्नान किया करता हूं।" जब यह जंगल में रहता था तब किसी प्रकार का भय नहीं था। इसने अहिंसा का साधन किया। इसकी 'वैलडन' नामक पुस्तक पढ़िये इसमें लिखा है कि वेद ही पढ़ने योग्य पुस्तक है। वस्तुतः दयानन्द के विचारों का संसार में साम्राज्य है। दयानन्द की शिक्षा का प्रभाव भारत के बाहर के देशों पर भी पड़ा। विदेशों में आर्यसमाजों की स्थापना हो गई है। स्वामी जी ने बाइबिल की त्रुटियों को दर्शाया। अमेरिका के पादरियों ने सन् १६३८ में निर्णय करके कहा कि बाईबिल ईश्वरीय नहीं है। न्यूयार्क के लार्ड कैशन ने लिखा है कि मसीह खुदा का बेटा नहीं था। आज ईसाई लोग बाइबिल का भिन्न-भिन्न प्रकार से उल्था करते हैं। दयानन्द के किए हुए काम का यह प्रत्यक्ष फल है।

अमेरिका में संस्कृत के चार बड़े प्रेस खुले हैं। दुनिया वेग के साथ आपकी ओर बढ़ रही है। आपको उनका सहर्ष स्वागत करना चाहिये। यहां से अधिक संख्या में इंग्लैण्ड और अन्य देशों में उपदेशक भेजने चाहियें। स्वराज्य-प्राप्ति के लिये प्रयत्न इतना फलवान् नहीं हो सकता जितना कि विदेशीयों की पब्लिक ओपीनियन बनाने के लिये। लाखों रुपया भारत के विरुद्ध अनेकानेक किम्वदन्तियां उड़ाने में व्यय किया जाता है। अच्छा हो कि हम वैदिक धर्म के कार्य को शीघ्रातिशीघ्र हाथ में ले लेवें। सभाएं करें और लाखों पुस्तकें प्रकाशित की जावें। पुस्तकें ऐसी हों जिनमें प्रत्येक विषय पर सविस्तार बहस की गई हो। आपके पास "सत्यार्थप्रकाश" के अतिरिक्त विदेश में भेजने योग्य अन्य कोई पुस्तक नहीं है। आपने स्वामी जी की सेवा के लिये क्या त्याग किया है? ज़रा विचारिये तो सही। हे राम और कृष्ण की सन्तान! वेदों के मानने वालो! जागो। *आज ४० वर्ष व्यतीत हो गये हैं। आपने कुछ भी नहीं

* अब ११५ वर्ष।

किया। यों ही जय-जय की ध्वनि करने का क्या अर्थ है? अपने जीवन इस मिशन पर बलिदान कर दो। देखना, एक संन्यासी के शब्द यों ही न जायें।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का वेदोपदेश

वेदोपदेशदाता श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने, **"व्रते दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्। दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्य माप्यते।"** मंत्र का पाठ कर इसी के आधार पर व्रत की महिमा बतलाई एवं ऋषि दयानन्द को आदर्श व्रती, दीक्षित, श्रद्धालु तथा सत्यनिष्ठ बतलाया। आपने कहा कि "जो व्यक्ति परमात्मा पर विश्वास करके और उसकी सहायता मांग कर, कि **"अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि"।** हे भगवन्! हमें व्रतों के पालन की शक्ति दो, इसी व्रत का अनुष्ठान ही सत्य पथ है, जो कार्य करता है वही व्यक्ति धन्य है और उसी को गुरु दीक्षित करता है।

सच्चा व्रती हमारा आदर्श गुरु दयानन्द, स्वा० विरजानन्द ही से दीक्षित हुआ। भाग्य से जब मनुष्य उत्तम दीक्षा प्राप्त कर लेता है तब ही सच्चे पथ-प्रदर्शक को पा लेता है। उसको परमात्मा की सहायता मिल जाती है और तब वह दाक्षण हो जाता है। उसे कौशल प्राप्त हो जाता है और वह बड़ा प्रवीण हो जाता है। अपनी कुशलता से सब कुछ सुखकर बना लेता है। जिस व्यक्ति को दक्षता प्राप्त हो जाती है उसी को श्रद्धा मिला करती है। आत्मविश्वास तब ही होता है, जब मनुष्य दक्ष होता है। दक्षिणा से उस श्रद्धा के मिलने पर जिसकी महिमा उपनिषदों और गीता में सर्वत्र गाई है, **"श्रद्धया वै लभते ज्ञानम्"।** श्रद्धालु ही ज्ञान प्राप्त करता है, ज्ञान ही अमृतत्व है, उस ज्ञान को प्राप्त करता है। वही उस परमतत्व सत्य स्वरूप अखिल जगन्नियन्ता के ज्ञान का अधिकारी होता है जो श्रद्धावान् होता है। अतः इस श्रद्धा द्वारा वह सत्य को प्राप्त कर लेता है। इसको प्राप्त करके सर्वदा उसकी विजय होती रहती है। कभी पराजय नहीं होती। आत्मविश्वासी जीवन-संग्राम में कभी पराजित नहीं होता। ऋषि का दृढ़ आत्मविश्वास उसको **'सत्यमेव जयते नानृतम्'** के

सिद्धान्त पर लगाये हुए था जिस के बल से वह कभी भयभीत न हुआ। लाख विरोध हुए। यह आत्मविश्वास, यह श्रद्धा उस अद्भुत कुशलता और योग्यता का फल थी जिसे ऋषि ने वीतराग विरजानन्द की दीक्षा से प्राप्त किया था और उस दीक्षा की योग्यता उस समय आई जब ऋषि का जीवन तपश्चर्या का और व्रतों का जीवन बन गया था।

हे आर्य पुरुषो! इस व्रत की महिमा को समझो और इस पर आचरण करो, व्रती बनो, दीक्षा प्राप्त करो, दक्षिणा प्राप्त करो। श्रद्धा प्राप्त करके सत्य लाभ करो।

श्री स्वामी अच्युतानन्द जी का वेदोपदेश

तमीडत प्रथमं यज्ञसाधं विश आरीराहुतमृञ्जसानम्।
अर्जः पुत्रं भरतं सुपृदानुं देवा अग्निं धारयन् द्रविणोदाम्।।

ऋ. १/७/३/३।।

यह मंत्र पढ़ने के बाद स्वामी जी ने कहा कि ये कैसे प्रिय शब्द हैं? ये सिखाते हैं कि परस्पर प्रेम करो, वैर विरोध मत करो। आपस में मित्रता का व्यवहार करो एवं शान्ति से, भगवान् जो सबको उत्पन्न करने वाला है, जिसने हमारा पालन पोषण किया है और जितने जीव उत्पन्न होते जायेंगे उन सब का पालन पोषण करेगा, ऐसा जो परमात्मा है, उसका गुणानुवाद करो। वही परमात्मा धन, वैभव, एवं आरोग्यता का देने वाला है। "आप के धर्म की रक्षा हो और वृद्धि हो" ऐसा ऋग्वेद-संहिता का मन्त्र बतलाता है। यह कहता है कि हज़ारों मिलकर परमात्मा की स्तुति करें। हमारे ऋषि-मुनि एकान्त में बैठकर विचार किया करते थे तथा वन में बैठ कर शान्ति पूर्वक ईश-चिन्तन किया करते थे। इसीलिये वेद में लिखा है कि १००-५० भी इकट्ठे होकर परमात्मा का भजन किया करें। निष्रुक व्यापक भगवान् का नाम है आप उसके कर्मों को देखें। जिस भगवान् ने चन्द्र सूर्य को स्थिर किया उस की आराधना अवश्य होनी चाहिए। जब हमारा परमात्मा से प्रेम हो जाय तब ही हमारा कल्याण है। सामवेद में लिखा है कि यदि सच्चा लीडर है तो केवल परमात्मा है और वही प्रभु सच्चा अर्थ बतलाने वाला है। इस युग में यदि कोई ऋषि हुआ तो

वह स्वामी दयानन्द था (हर्षध्वनि)। सच्चे वेद का प्रकाश करने वाला दयानन्द है। वही हमारा लीडर है। कुछ वर्ष पहिले वेदों का अर्थ समझना कठिन था परन्तु स्वामी दयानन्द वेद का अर्थ जानने वाला था और उसी ने प्रकाश डाला है कि आज हम वेदों के अर्थ को धड़ाधड़ समझ रहे हैं। मनुष्य कैसा ही संयमी हो परन्तु वह चलायमान हो जाता है। बोम्बे मेल **(Bombay Mail)** भी १० मिनट लेट हो जाती है परन्तु मरमात्मा की घड़ी कभी लेट नहीं हो सकती। वेदों को पढ़कर परमात्मा की भक्ति किया करो। सारे कष्टों को दूर करने वाला वही एक मात्र परमात्मा है। हम इतने दुःखी हैं तो अवश्य ही स्वदुःख निवारणार्थ हमें परमात्मा की भक्ति करनी चाहिये। यदि हम सुखी हैं तब भी परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए।

अतः वेद भगवान् ने लिखा है कि उस भगवान् के मित्र बन जाओ। जिस प्रकार मित्र रक्षा करता है उसी प्रकार वह परमात्मा भी तुम्हारी रक्षा करेगा।

धर्म्म और धन क्या है? ज्ञान धर्म है। आचरण धन है। इस लिये यदि आप सब प्रकार के धन चाहते हैं तो स्वामी जी के आदेश का पालन करें। बह्मचर्य्य पालन करें जिससे आपके शरीर में बल आये और आप अपनी रक्षा कर सकें। यह न हो कि हमारे भाइयों और बहिनों का अपमान होता रहे और हम उसे देखते रहें। ब्रह्मचर्य के साधन से परमात्मा भी प्राप्त हो सकता है। भगवान् ने कहा है **"तुम ब्रह्मचारी बनो जिससे यदि घर में मृत्यु भी आए तो तुम उसको बाहर निकालने में समर्थ हो।"** इसलिए बल के लिये परमात्मा की प्रार्थना करो। वह परमात्मा सर्वशक्तिमान है। वही सब कुछ देने वाला है। वेद में लिखा है कि वेद को सुनकर परमात्मा बड़ा प्रसन्न होता है। यदि आप दुष्कर्म करेंगे तो वह अप्रसन्न होगा। आप जानते हैं कि यदि पुत्र-पुत्री सुकर्म करते हैं तो माता-पिता प्रसन्न होते हैं। विपरीत इसके कुकर्म करने पर उन्हें दुःख होता है। उसी प्रकार माता-पिता परमात्मा है। हमारे यहां लिखा है कि परमात्मा ही माता और पिता है। ईसाइयों के यहां परमात्मा को माता नहीं मानते हैं। परमात्मा

के ज्ञान से हमारा लाभ हो सकता है। इसलिए भगवान् की भक्ति करके उसको प्राप्त करो। इसीलिए हमारे पूज्यपाद स्वामी जी ने कहा है कि "वेद का पढ़ना और पढ़ाना हमारा परमधर्म है।" समस्त संसार में वेदों का प्रचार करने के लिए हमको भरसक प्रयत्न करना चाहिए। हम समस्त संसार के रक्षक हों न कि भक्षक। सज्जनो! इसलिए नित्य प्रति वेद पाठ किया करो। मनुष्य प्रार्थना करता है कि उसके सब संताप दूर हो जायें। असली तापों को दूर करने वाला वेद है। अतः वेद मन्त्रों को पढ़ो तथा दूसरों को पढ़ाओ, यही हमारा मुख्य धर्म है। यह आपका धर्म है कि वेदों को पढ़कर, उन्हीं के अनुकूल अपना वैदिक जीवन बनायें इसी में आप का हित है। वेद का कभी परित्याग न करो। यदि ऐसा करोगे तो अशुद्ध हो जाओगे। लिखा है कि यज्ञ, तप, दान आदि जितने कर्म हैं उनमें वेद का ज्ञान सब से प्रधान है। अतः वेद का प्रचार करो। सब से मुख्य बात यह है कि इसका अर्थ हमको ज्ञात हो जाना चाहिए। ज्ञान सर्वोत्तम है। अतः ज्ञान की अधिक महिमा लिखी है। ऐसा न हो कि कर्म करते-करते ज्ञानहीन हो जायें। भाइयों! जो वेद जानेगा वही परमात्मा को समझ सकेगा। इसलिए महर्षि ने कहा है कि वेद का पढ़ना पढ़ाना आर्यों का मुख्य धर्म है। इस पर उन्होंने अधिक ज़ोर दिया है। सच्चा धर्मात्मा वही है जो वेद का पठन पाठन करता है।

हिंदू जाति मर रही है। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन नहीं हो रहा, कभी पुत्र तो कभी पुत्रियों को कष्ट होता है। आप चाहें तो संयम से १०० वर्ष तक जी सकते हैं। परन्तु आज सब ६०-७० वर्ष की आयु के बाद ही खटियों पर पड़ जाते हैं। बाल विवाह हो रहा है। वृद्ध विवाह हो रहा है। बहुत सी बातें हैं। मैं क्या कहूँ? इसलिए आप सच्चे आर्य समाजी बन कर समाज की महिमा बढ़ाते हुए इन सब बातों पर आचरण करें।

यह शताब्दी स्वामी दयानन्द का स्मारक है। उनका स्मारक क्या हो सकता है? संन्यासी लोग बैठकर काम करें। कन्यापाठशालाएं स्थापित की जायें। वेद पढ़ें और दूसरों को पढ़ावें। संन्यासाश्रमों को स्थापित करना संन्यासियों का धर्म है। इसलिए लिखा है कि वेद का धर्म परम धर्म है।

स्वामी जी ने कहा है कि कोई आश्रम बुरा नहीं है। अतः भाइयो! प्रतिदिन वेदाध्ययन किया करो। आर्यसमाज में प्रति दिवस वेद का पाठ होता रहे। जिस प्रकार भोजन करने की प्रतिदिन आवश्यकता पड़ती है उसी प्रकार वेद का पाठ करने की भी प्रतिदिन आवश्यकता पड़नी चाहिये। जहां-जहां इस प्रकार की संस्थाएं विद्यमान हैं वहां-वहां वेद पढ़ने वाले नियुक्त किये जायं। वेद में लिखा है **"हे परमात्मा! हमारे समीप जो महात्मा रहें उनको धैर्य प्रदान करो। उनका दैनिक सत्संग परमावश्यक है, नित्य प्रति वेद पाठ होना चाहिए।"** सांसारिक कार्य सम्पादन करते हुए भी आप लोग इसके लिए १ घटां प्रतिदिन निकाल लें। मैं अन्त में कहूँगा कि जितने आर्य पुरुष एवं आर्य ललनाएं इस समय यहां उपस्थित हैं वे सब प्रतिज्ञा करें कि हम वेद पढ़ा करेंगे तथा अपने जीवन को वैदिक जीवन बनायेंगे। अपना जीवन पवित्र बनायेंगे और आर्य जाति की रक्षा करेंगे। मैं उस परम शक्तिशाली परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि हे परमात्मन्! आप इन आर्य पुत्र-पुत्रियों को शक्ति दें, बल दें, एवं सब को सुखी करें।

ओ३म् शान्ति! ओ३म् शान्ति!! ओ३म् शान्ति!!!

(स्वामी दयानन्द की जय! ऋषि दयानन्द की जय)

श्री स्वामी गंगागिरी जी का भाषण

गीता में आता है कि जब-जब धर्म की ग्लानि होती है तब कोई न कोई पुरुष ऐसा आता है जो उसको उठाता है। धार्मिक भाव भारत से उठ चुके थे, धर्म का पहला साधन वेद-प्रचार भारत से दूर हो चुका था, धर्म का दूसरा मूल कारण आश्रम-व्यवस्था एक प्रकार से भारत में उठ गई थी, इसी प्रकार वर्ण-व्यवस्था भी नष्ट हो चुकी थी। देव पूजन, ईश्वरोपासन के भाव भी मिट चुके थे। लोगों के मनगढ़न्त ईश्वर कायम हो चुके थे। इन्हीं समस्त बुराइयों को दूर करने के लिये महर्षि दयानन्द का जन्म हुआ था।

मनु जी महाराज ने धर्म की चार कसौटियां बतलाई हैं। जो व्यक्ति इन चारों पर ठीक उतरे उसी को धार्मिक व्यक्ति समझना चाहिये। विद्या

धार्मिक पुरुष में ही पाई जाती है। विद्वान् होने के साथ ही साथ वह सदाचारी भी होता है। जो व्यक्ति मन, वचन और कर्म में समान हो उसी को सदाचारी समझना चाहिये। स्वामी दयानन्द इस कसौटी पर पूरे उतरे। आज हम १० पुरुषों के विरुद्ध बोलने का साहस नहीं कर सकते परन्तु स्वामी जी को पद-पद पर शत्रुओं का सामना करना पड़ा और उन सब पर वे विजयी ही रहे। वे सच्चाई पर दृढ़ थे। उनमें अभिमान का लेष मात्र भी भाव न था। अमृतसर में संस्कृत बोल रहे थे, मुख से एक अशुद्ध शब्द निकल गया। एक लड़के ने कहा-"महाराज! आपने इस शब्द का अशुद्ध प्रयोग किया है।" इस पर स्वामी जी उत्तर देते हैं, "भद्र! हां, यह मुझसे भूल हुई है।" अहा! तनिक भी अभिमान नहीं! यह शताब्दी ऐसे ऋषि की है जिस की भारत को बड़ी आवश्यकता थी। यह उसी का पुण्य, तप और तेज है कि लोग खिचे चले आ रहे हैं। हमें समस्त संसार में इस ऋषि का सन्देश पहुंचाना है। यह ऋषि सब कसौटियों पर पक्का उतरा हुआ ऋषि था। आपका और हमारा कर्तव्य है कि इस महान् आत्मा के लिये हुए उपदेशों का देश २ दिशा २ में ले जावें। स्वामी जी ने हमें एक ईश्वर का पूजन बताया। माता-पिता, गुरू और विद्वानों को देव बताकर उनके पूजन का उपेदश किया। वेद के सच्चे अर्थों का प्रकाश किया। धर्म के सच्चे अंग वर्णाश्रमों की उचित व्यवस्था की। अनाथों और विधवाओं की पुकार सुनी। अतः आप लोग उनके मन्तव्य को देश-देश में ले जायें।

श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी का व्याख्यान

सज्जनो! आप लोग छोटी-छोटी बातों के लिये इतने परेशान हैं। उस ऋषि की महत्ता एवं दूरदर्शिता पर तो विचार करें कि वह कैसा स्पष्ट प्रश्न हमारे सामने रखता है, "विवाह माता-पिता के आधीन हो वा वर-वधू के?" उत्तर-"वर-वधु के, परन्तु माता-पिता की सम्मति से।" इसी प्रकार ऋषि ने समस्त शुभ बातों का विधान हमारे सम्मुख रख दिया है। दयानन्द के उपकारों और सुधारों का अनुमान इससे ही हो सकता है कि आप

लोग उस सुधारक से पहले की गिरी हुई दशा का विचार करें। स्थान-स्थान पर बलिदान दिये जाते थे, देखिये विचारिये! ये कैसे भयानक होते थे। परन्तु उस वीर ने निर्भयता पूर्वक इनका खण्डन किया। उनका पहला शास्त्रार्थ धर पर अपने पूज्य पिता जी से ही होता है। उसमें पिता जी निरूत्तर हो गये और उनकी हार हुई। वे पिता जी के समान सब को हराते हुए चले गये। उन्होंने आर्यों से विशेष रूपेण कहा, **"मांस न खाओ, मद्य मांस का त्याग करो। वेदों की शिक्षा घर-घर फैलाओ।"** वेदोपदेश में हिंसा की बू नहीं। स्वयं ऋषि का जीवन एक आदर्श जीवन था। वह मरते-मरते भी पाठ पढ़ा गये। उन्होंने बतलाया कि किस प्रकार जीना चाहिये और किस प्रकार मरना चाहिये। पहला वीर जिसने इनकी शिक्षा को ग्रहण किया तथा कार्य में परिणत किया **लेखराम** था। वह आर्य वीरों की मौत मरा। एक वह मरना है, मरते-मरते कहते हैं-**"अल्ला बचाओ!"** एक वह मरंना है, वह मरते-मरते कहता है-**"ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो।"**

शोक का स्थान है कि उसी के शिष्य आपस में लड़ते और उसकी शिक्षा के विरुद्ध आचरण करते हैं। बाल ब्रह्मचारी पाखण्ड का खण्डन करने वाले दयानन्द बतला गये हैं, **"जो संन्यासी होकर भी पाखण्ड का खण्डन और सत्य का मण्डन न करे वह संन्यासी ही नहीं है बल्कि पृथ्वी के लिये भार रुप है।"** सच्चे संन्यासी ने ऐसा कहा ही नहीं बल्कि किया भी था।

महाराजा जोधपुर के दर्बार में उसने बेधड़क होकर कहा-"शेर, शेरनी से समागम करके शेर पैदा किया करते हैं, अब शेर कुतिया से कुत्ते पैदा करेंगे।" यही एक शब्द, पीछे उनका घातक बना। परन्तु वह जान बूझकर एक पग भी पीछे न हटा। आज स्वामी दयानन्द का नाम लेने वाले वेश्याओं का नाच देखते हैं, ऐसा भविष्य में कोई न करे। और स्वामी दयानन्द की जय के साथ आपके मुख से समस्त दोष निकल जावें।

स्वयंवर के विषय में बोलते समय म० राजेन्द्रपाल की इस आपत्ति पर "स्वामी जी पहले उस समय को तो लाइये जब मात-पिता घी आज्ञा की आवश्यकता न रहे।" स्वामी जी ने कहा-"वह शुभ समय आ गया है।"

रात्रि वहुत हो गई थी इस कारण लोगों के सुनने के लिये तैयार होते हुए भी स्वामी जी ने जय ध्वनि के बीच अपना व्याख्यान समाप्त किया।

श्री स्वामी सत्यानन्दजी का धर्मोपदेश

देवियो व आर्य सज्जनों!

अपने अन्तःकारण की शुद्धि के लिए भगवान् की भक्ति की आवश्यकता है। जव तक मन पवित्र नहीं होता तब तक इसमें वल नहीं आता! जीवन संग्राम में विजय पाने के लिये शारीरिक बल ही नहीं, मानसिक बल की भी परमावश्यकता है। भगवान् दयानन्द ने मानसिक बल का ही उपार्जन किया था। आज ४ लाख के लगभग नर-नारी दयानन्द के शारीरिक बल के द्वारा ही नहीं, प्रत्युत उसके अलौकिक मानसिक वल और दिव्य ज्ञान-ज्योति के द्वारा ही यहाँ आकर्षित हो रहे हैं। उसने ईश-भक्ति के द्वारा अपने अन्तःकरण को वलि बना लिया था। उसका मन पवित्र था।

मनुष्य को मनोवल प्राप्त्यर्थ और विचारों की निर्मलता के लिये सदैव यत्न-शील होना चाहिए। विचार-शक्ति से पारस्परिक ऐक्य एवं व्यक्तिगत आन्तरिक सौहार्द का जन्म होता है। हृदय-तन्त्री एक सुरीला राग गाती है। आनन्द का उद्वेग होता है। धारणा के द्वारा मनुष्य को इस आनन्द को प्राप्त करना होगा। धारणा अपने भीतर ही होती है। धारणा की प्राप्ति चित्त-वृत्तियों की एकाग्रता पर निर्भर होती है। इससे नीति एवं विनय-शीलता की प्राप्ति होती है। ये ही दोनों जय के साधन हैं। आज आप "दयानन्द की जय" के नारे लगाते हैं, परन्तु जय के लिए इन दोनों की प्राप्ति परमावश्यक है। दयानन्द की वास्तविक ''जय'' वेद-रक्षा और आर्य संस्कृति रक्षा के अन्तर्गत है।

हमारे जीवन का लक्ष्य सदा उच्च होना चाहिये। हमारा जीवन प्रभु की उपासना द्वारा बुद्धि की शुद्धि के लिये है। हमारी सभ्यता में बुद्धि का स्थान उच्चतम है। इसी से जय होती है। गायत्री मन्त्र में बुद्धि की शुद्धि और पवित्रता ही मांगी गई है इसी के द्वारा दयानन्द ने विजय पाई

थी। पूजा वा उपासना का दूसरा फल सत्क्रियाओं का विकास है। मनुष्य शुभ कर्म करने के लिये ही उत्पन्न हुआ है। इसका तीसरा फल श्रुति-रक्षा है। वेद के **गूढ़ातिगूढ़** तत्वों का उसे ही ज्ञान होता है जो विषयों से परे भगवद्-भक्ति में लवलीन है। इसका चुतर्थ फल दृष्टि की रक्षा है। नेत्र शक्ति का इससे विकास होता है। **"श्रुताय च दृशाय च"** के मूल सिद्धान्तों को जो भगवान् की उपासना से प्राप्त करता है वही सफल होता है। इस उच्च लक्ष्य की पूर्ति करो और अपने जीवन को पवित्र बनाओ।

आज आप यहाँ शताब्दि मनाने की ख़ातिर जमा हुए हैं और यहां से आपको कोई प्रसाद लेकर जाना चाहिए। स्वामी जी की शिक्षा का भाव प्रबल रूप से धारण करके जाना चाहिए। महापुरुष जातियों को पैदा करने की ख़ातिर आया करते हैं। महाराज ने हम पर बड़ा उपकार किया है जो हमारे सामने एक उद्देश्य रखा है। आर्य समाज का हिन्दू धर्म में जो संगठन हुआ है उसकी एक विशेषता यह है कि उसमें क्रिया को धर्म रूप में माना गया है। कोई कह सकता है कि वैष्णव आचार्य भी ऐसी ही शिक्षा देते हैं। परन्तु उसकी शिक्षा में वह पवित्रता न रही। अगर प्रीति विलास का रूप धारण कर ले तो वह अपवित्र हो जाती है। उन्होंने जिस प्रेम का प्रचार किया है वह विलास के कीचड़ में पड़कर गन्दा हो गया है। ऐसे प्रेम ने हिन्दु जाति को क्या शिक्षा देनी थी, हिन्दुओं को इसने क्या जीवन देना था? ऐतिहासिक सज्जन इस बात को जानते हैं कि यह प्रेम हिन्दु जाति को हर तरह गिराने वाला साबित हुआ है। क्षात्र धर्म क्यों गिरा? क्योंकि क्षत्रियों में से कर्म धर्म मिटते चले गये। मैं समझता हूँ कि बौद्ध फ़िलासफ़ी ने भी हिन्दु जाति को बहुत कुछ नुकसान पहुँचाया है। स्वामी जी ने बतलाया है कि इहलोक और परलोक दोनों को बनाने वाला **धर्म** ही है। **वेद जो प्रेरणा करता है वही धर्म है** और उसी से मुक्ति मिलती है। महाराज के उपदेशों और शिक्षाओं में यह विशेषता है कि उन्होंने पुराने धर्म को पुनर्जीवित कर दिया है। वेद मुक्ति, कल्याण सब कर्मों को मानता है और वेद के मानने से ही आर्य जाति का कल्याण है।

श्री स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जी का धर्मोपदेश

आपने कहा कि **'मोक्ष'** के दो ही मार्ग हैं। एक ज्ञान का, दूसरा कर्म का। वेदानुसार दोनों समन्वित साधन हैं। काशी के अजामेधयज्ञ में बाल शास्त्री भी सम्मिलित थे, भले ही उन्होंने मांस नहीं खाया, परन्तु लोग इसे ही उनकी मृत्यु का कारण ठहराते हैं। इसी प्रकार यदि कोई गन्तव्य तो रखता हो परन्तु कर्त्तव्य न करता हो तो फलभागी नहीं हो सकता है। मनु ने पांच प्रकार के चांडाल बतलाये हैं। हिंसक, मद्यप, चोर, व्यभिचारी तथा इनसे सम्बन्ध रखने वाला। भाइयो, केवल प्रार्थना करने वाला और तदनुसार कर्म न करने वाला भांट होता है। अतः कर्मशील होना चाहिये।

श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार का भाषण

सभ्य महोदयो, देवियो तथा भद्र पुरुषो!

मैं आज अपने हृदय के अन्दर उठने वाले भावों को वर्णन नहीं कर सकता। जिस विषय पर मुझे कहना है उसे ही कहूँगा। आज एक वृहत् यज्ञ का आरम्भ होता है। इसलिए यज्ञ पर महर्षि ने जो उपकार किया है उसे ही मुझे वर्णन करना है। आज सभाओं में विचार किया जाता है कि स्कूलों और कालिजों की शिक्षा-प्रणाली को बदल दिया जाये क्योंकि इसने हमारी सन्तानों को ईसाई बना दिया। परन्तु यह हमारा ही दोष है कि हमने उनको शिक्षा नहीं दी और फिर उनको दूसरों ने जैसा सिखाया वे उसे ही मान गये। यदि झूठ बात को भी सब चिल्ला कर दोहराने लग जायें तो सब उस पर विश्वास करने लग जाते हैं। यदि चार आदमी बैठ जाते हैं और उसे पागल बना देते हैं। कहते हैं कि एक बार लड़कों ने सलाह की कि स्कूल से छुट्टी ले लेवें। जब मास्टर साहब आये, उन्होंने कहा, "क्यों मास्टर साहिब! आज चेहरा क्यों उदास है?" दूसरे ने कहा, "घर में कुशल तो है न?" इसी प्रकार तीसरे चौथे ने कहा, और मास्टर साहिब ने तंग आकर छुट्टी दे दी। इसी तरह यदि हम लोग किसी को पागल बनाना चाहें तो उसे पागल बना सकते हैं। भारत वर्ष के नवयुवकों

के साथ ऐसा ही व्यवहार हुआ। पहिले ही दिन उन्होंने पढ़ा कि प्राचीन लोग यज्ञ किया करते थे और उनमें पशुओं की बलि देते थे। और वही भाव लेकर वे कहते हैं कि हम अपराधी कैसे? तो क्या युरोप के विद्वान् इनके अपराधी थे जिन्होंने वेद के आशय को पढ़ाया? युरोपियन विद्वानों ने वेद का अनुसन्धान करके पढ़ा था। उन्होंने वेद का उल्टा अर्थ लगाया कैसे? आप अपने भाष्यों को देखिये। उनका अँग्रेज़ों ने अनुवाद किया और हमारे बच्चों ने उसे पढ़ा। परन्तु ऋषि ने कैसा परिवर्तन किया है? वह हमको कैसी स्वच्छ अवस्था में लाया है? आज मैं उसी का वर्णन करता हूँ–

कैसी घोर अवस्था हो गई थी! युरोपियन विद्वानों का क्या दोष है? ब्रह्मवैवर्त पुराण को उठाकर देखिये, कहने में संकोच होता है, परन्तु संकोच करना गुरु ने सिखाया नहीं। एक राजा के यज्ञ में करोड़ गौएं मारी गईं। यह ब्रह्मवैवर्त पुराण में लिखा है। यह तो यज्ञ के नाम पर होता था। इसलिए आज कहते हैं कि हरिद्वार में गंगा पलट गई। अधर्म मैं बतलाऊंगा कि वेदों का जो अर्थ किया गया है वह अशुद्ध है। उनके ठीक अर्थों को समयाभाव के कारण मैं नहीं बतला सकूंगा।

सब से पहले मैं यह बतलाना चाहता हूँ कि वेद का अर्थ कुछ का कुछ हुआ। आज वेद की मीमांसा करने का दिन है। इसलिए ऋषि दयानन्द ने यज्ञ की क्या विधि बतलाई है उसका वर्णन किये बिना नहीं रहा जा सकता। मैं जब छोटा बालक था तब मैं गुरुकुल में पढ़ने गया। मैं यू०पी० का रहने वाला था और मेरे संगी साथी पंजाब के रहने वाले। मैंने कहा, "भाइयो! आज तो कुकड़ी चबाने को मन करता है।" जितने पंजाबी साथी थे सब के सब यह सुन कर मुझे लिपट गये और कहने लगे, ये क्या अनर्थ है? तुम कहां पैदा हुए हो कि यह भ्रष्ट शब्द मुख से निकाल रहे हो। मैंने कहा-"आज कल कुकड़ी का मौसम है। इसमें आश्चर्य ही क्या है?" पंजाबी भाई बड़े रुष्ट हुए। परन्तु जब मैंने यह बतलाया कि यह कुकड़ी का मौसम है उसमें दाने होते हैं इत्यादि। तब वे समझे कि छल्ली को कुकड़ी कहते हैं। इसी तरह एक यू०पी० वाला

पंजाब में चला गया। कोई बैगन बेचता था। यू०पी० वाले ने पूछा यह क्या है? पंजाबी ने उत्तर दिया "बताऊं"। इस पर यू०पी० वाले ने कहा "बताओ भाई बताओ"। ऐसे ही ३-४ बार होता रहा। एक शब्द के कई अर्थ होते हैं। वही "कुकड़ी और बताऊं" का मसला वेदों के साथ हुआ है। और उस अनर्थ को लोगों ने बढ़ाया। ऋग्वेद में लिखा है, "गौओं के चमड़े को अलग किया और सब को उसमें पीसा और सारा अन्न पीसा, एवं उसके भीतर उसके बच्चों को मिला दिया और धनुषबाण लेकर रखवाली की और बड़े मज़बूत हो गये।" यह मन्त्र पढ़ा गया और कहा गया कि प्राचीन लोग शिकार करते थे। भाइयो! जब तक कुकड़ी का अर्थ नहीं समझे थे वह मुर्ग़ी थी, परन्तु जब उसका भेद बतलाया गया तो उसका अर्थ कुछ और हो गया। गो शब्द का अर्थ वाणी, पृथ्वी और गाय होता है। अच्छा भाई यहां गाय के स्थान में पृथ्वी रखिये। वर्षा ऋतु में जल पड़ने से मिट्टी जम गई। हल लाकर उसे जोता तो उसके ढेले-ढेले अलग हो गये। खेती पैदा हुई। उसे खाया पिया तो हट्टे कट्टे हो गये। यह एक नमूना है। एक दूसरा नमूना आपको बतलाता हूँ। दूसरे नमूने में रन्तिदेव के नाम पर दो हज़ार गौओं का वध हुआ था। अब ज़रा इतिहास की ओर चलें। जैसे गो शब्द के साथ अनर्थ हुआ वैसे ही बहुत से शब्दों के साथ हुआ है। अब 'मांस' शब्द को ले लीजिए। संस्कृत में मांस शब्द के भी अनेक अर्थ हैं। उदाहरणार्थ, फल के छिलके को त्वचा कहते हैं। हड्डी को गुठली कहते हैं और गुद्दे को मज्जा कहते हैं। आम का फल देखने से उसमें केसर, मांस, मज्जा और गुठली सब अलग-अलग दिखलाई पड़ते हैं। अथर्ववेद में रोहित औषधि का वर्णन किया गया है। हमारी चर्बी से तुम्हारी चर्बी ठीक हो, मांस से मांस ठीक हो और रूधिर से रूधिर ठीक हो। इसने बड़ा भ्रम डाला है। यदि आप किसी देशी रियासत में चले जायं और किसी व्यक्ति से चार आने का गोश्त मोल लाने के लिये कहें तो प्रश्न होगा कि किस पशु का गोश्त लाना चाहिए, परन्तु उससे गो मांस नहीं समझा जाएगा। यदि ब्रिटिश राज्य में चले जायं तो गोमांस भी समझा जायेगा। वहां (देशी राज्य में) गोहत्या कानून की

दृष्टि से निषिद्ध है। इसी प्रकार वेद की आज्ञा है कि जो मनुष्य, मनुष्य को मार कर अपना शरीर पुष्ट करे अथवा घोड़े को वा किसी अन्य पशु को वा गौ को जिसे वह "गौ-माता" के नाम से पुकारता है, मारकर व्यवहार करे, यहां तक कि वह गौ-दुग्ध को अनुचित रुपेण प्रयोग में लाये तो राजा को अधिकार है कि उसे प्राण दण्ड दे दे। जिस प्रकार देशी राज्यों में 'मांस' शब्द से गोमांस का बोध नहीं होता, उसी प्रकार वेद में 'मांस' शब्द का अर्थ गोश्त नहीं समझा जा सकता। हमारे भाइयों का कथन है कि वेद मांस खाने का निषेध करते हैं परन्तु यज्ञ कार्यों में उसका विधान करते हैं।

अब मैं दिखलाता हूँ कि यज्ञ में भी मांस की आज्ञा नहीं दी गई है। अथर्व वेद में एक मन्त्र आता है जिसका अर्थ है, कि वह यजमान बड़ा मूर्ख है जो कि आशय को न समझ कर गो, आदि पशुओं के अंग काट कर यज्ञ में डालता है। इसी मन्त्र का अनुवाद ग्रीफ़िथ साहिब ने अंग्रेज़ी में किया है। वे कहते हैं कि इस मन्त्र ने बड़ा गड़बड़ मचाया है। और इसीलिए उन्होंने टिप्पणी में लिख दिया है कि यहां वेद का अर्थ अस्पष्ट है।

मनु महाराज भी मांस का निषेध करते हैं। वस्तुतः हिंसा की कहीं भी आज्ञा नहीं दी गई है। वेद में यह किसी स्थान पर नहीं बतलाया गया है कि मछली के मांस को पकाकर यज्ञ में डालो। प्रत्युत यह कहा गया है कि उसमें उत्तमोत्तम अन्न डाला करो। आज ऋषि दयानन्द पर यह आक्षेप लगाया जाता है कि ऋषि ने यह नई लहर कहाँ से चला दी?

अब मैं उन वेदमन्त्रों को बतलाना चाहता हूँ जिनके आधार पर लोगों ने पशु-हिंसा करना आरम्भ किया। वेद में लिखा है कि गौं की यज्ञ में आहुति दो। इससे यज्ञ में गो-हिंसा का प्रतिपादन मान लिया गया। परन्तु जिस को पढ़ कर आहुति दी जाती है उस पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। उस मन्त्र में बतलाया गया है कि वह गाय शत्रुओं का नाश करने वाली है। उससे अन्न भी उत्पन्न होता है। वह वरूणा की जिह्ना भी है। भाइयो! जब कुकड़ी का प्रभाव बतलाया गया था तो वह साफ़ ज्ञात हो

गया था। उसी प्रकार जब आपने इस गाय का बयान पढ़ लिया कि इसमें शत्रुओं के मुँह बन्द करने की शक्ति है, यह वरुण की जिह्वा है एवं वरुण के पेट में घुसी हुई है, यही नहीं, इसकी महिमा पृथ्वी और आकाश में व्याप्त है, इससे सब प्रकार के पौदे उत्पन्न होते हैं, तब इन सब बातों से प्रकट है कि इस प्रकार की गाय कोई साधारण गाय नहीं है। मुझे लम्बी यात्रा अल्प समय में ही समाप्त करनी है, नहीं तो मैं इस सूक्त की पूरी व्याख्या सुनाता, जिसको सुनकर आपका अश्रुपात हो जाता।

यह गाय वन्ध्या गाय है। फिर वेद ने किस प्रयोजन से यह कहा कि वन्ध्या गाय राजा का खज़ाना है? इस गौ में शक्ति नहीं कि शत्रुओं का मुख बन्द कर सके, परन्तु राजा के खज़ाने में मुख बन्द करने की शक्ति है। इस गौ के पेट में वरुण घुसे हुए हैं तथा राजा के खज़ाने का अध्यक्ष भी ब्राह्मण ही हो सकता है। अब प्रश्न यह है कि उसे राजा का कोष न कह कर वन्ध्यां गौ क्यों कहते हैं? आइये, वेद के गौरव को देखिये कि उसमें कैसा विलक्षण, कितना गहरा उपदेश भरा हुआ है। वेद कहता है "हे राजन्! तुम्हारे हाथ में प्रजा का खज़ाना है परन्तु यह तुम्हारे पास धरोहर रुप में है। तुम इसके स्वामी नहीं।" देखिये, वह गाय कैसी है? लिखा है वह गाय वन्ध्या है। दूध नहीं देती है। परन्तु सहस्रों दुहने वाले खड़े हैं। कैसी सुन्दर बातें हैं! हे राजन्! तू सहस्रों प्रजाओं से टैक्स लेकर खज़ाना बनाते हो, परन्तु तुम्हारे लिये तो वह वन्ध्या गौ है। यदि तुम इसमें से हिस्सा लोगे तो तुम्हें वैसा ही पाप होगा जैसा गौ का अंग काटने से होता है (हर्षध्वनि और तालियां)। इससे उत्तम क्या उपदेश दिया जा सकता है? यह गौ राजा का खज़ाना है परन्तु हे राजन्! तुम्हारे लिये नहीं। तुम्हारे लिये तो गौ वन्ध्या है। वन्ध्या गाय के अन्दर से दूध लेने का धर्म भी नहीं होता। अतः प्रजा का जो धन है, वह प्रजा के लिये है।

आपको एक और छोटी सी बात सुना दूं। उसी सूक्त में एक मन्त्र आता है और उसी मन्त्र के आधार पर कहा जाता है कि गोहत्या करनी चाहिए यह सिद्ध होगया। इस मन्त्र में लिखा है कि "हे गौ! जो तेरा पकाने वाला है" इत्यादि। अब यहां 'पकाने' का शब्द आ गया तो यही शब्द

पकड़ लिया। परन्तु इसी मन्त्र में आगे लिखा है, "डरो मत, हिफ़ाज़त करो।" ये सब ऐसी ही बातें हैं जैसे कोई मिरासी बैठा था, उससे मौलवी साहिब ने कहा—"नमाज़ पढ़ो!" उसने उत्तर दिया, कुरान शरीफ़ में नहीं लिखा है और निकाल कर भी दिखला दिया। उसमें लिखा था—"मत पढ़ो कुरान शरीफ़"। जब मौलवी साहिब ने सारे वाक्य को पढ़कर सुनाया—"मत पढ़ो कुरान शरीफ़ जब नापाक हो।" तब मिरासी ने कहा—"तो क्या सम्पूर्ण कुरान मेरे ही लिये है?" ये लोग यह नहीं आगे पढ़ते कि हे देवि! डरो मत! तुम्हारी रक्षा करें!

वेद में यह बतलाया गया है कि राजा की रक्षा के लिये तीन प्रकार के अफ़सर होने चाहियें। सबसे पहिला 'समीता' वह है जो खज़ाने की आय को देखता है। वह देखता है कि राज्य के खज़ाने में जो आता है उसमें एक पैसा भी छोटे को सता कर तो नहीं आता। अतः उसका नाम 'समीता'। दूसरा 'पकीता'। वह रूपये का हिसाब रखता है। अब "पकाने" का शब्द आया। उनसे पूछना चाहिये कि किसी दिन गुरु जी आपसे प्रसन्न हो जायें और कहें कि तुम बड़े पक्के हो, तो क्या आप हांडी में पक गये? तो 'पकीता' देखता है कि जो कुछ आया, वह हिसाब में आया कि नहीं? यह देखना उसका धर्म है। तीसरा है 'नेता' जो गाइड करता है। मन्त्र में लिखा है कि वे तीनों ब्राह्मण हैं। जब यह वन्ध्या गौ उत्पन्न हुई तब संसार थर-थर कांप उठा परन्तु ब्राह्मण लोग नहीं कांपे। उन्होंने इस दौलत को चकनाचूर कर दिया। इसके दो लातें होती हैं। एक लात आने के समय कमर में देती है और एक लात विदा होते समय गुद्दी पर मारती है। इसीलिये इसका नाम दौलत है। अरे लोगो! अपने को लक्ष्मीपात्र मत कहो। मंदान्ध हाथियों को कमल की नाल से नहीं बांध सकते।

संसार में कोई बन्धन ऐसा नहीं था जिसने ऋषियों पर आक्रमण न किया हो। परन्तु ऋषि ब्राह्मणों की शक्ति की समानता कोई नहीं कर सका। ब्राह्मणों और क्षत्रियों की शक्तियों को देखिये। क्षत्रियों ने ऐसी शक्ति दिखलाई जिसको संसार याद करेगा। यह बिखरा हुआ भारतवर्ष,

सहस्रों, टुकड़ों में विखरा हुआ भारत, कृष्ण की चतुर नीति से एक सूत्र में बँधा हुआ दीख पड़ता है। (हर्षध्वनि) क्षत्रियों की शक्ति का यही नियम है। क्षत्रिय इस सिद्धान्त पर चलते हैं कि "जैसा राजा होगा वैसी ही प्रजा होगी"। परन्तु ब्राह्मणों का मन्त्र इससे भिन्न है। "यदि राजा पापात्मा होगा तो धर्मात्मा प्रजा धर्म कर सकती है। पापी राजा, प्रजा पर एक क्षणा भी राज्य नहीं कर सकता है।" यह है ब्राह्मणाशक्ति! वे कहते हैं कि जिस दिन प्रजा धर्मात्मा होगी, उसी दिन राजा को धर्मात्मा हो कर चलना पड़ेगा। ५ हज़ार वर्ष पहिले मुरली के अन्दर वह वात नहीं थी, जो आज हज़ारों वर्षों के वाद उस ऋषि-वीणा में थी, जिसने भारत को गुंजायमान कर दिया। बोलो ऋषि दयानन्द की जय!

श्री कुंवर चांदकरण जी शारदा का भाषण

माननीय अपस्थित सज्जनो! मेरी माताओ, वहिनो और प्यारे भाइयो!

मेरे व्याख्यान का विषय 'महर्षि दयानन्द का सन्देश' **Message of Maharishi Dayananda** है। आज देश देशान्तर से आर्य भाई यहां योगेश्वर कृष्ण की जन्मभूमि (मथुरा) में दयानन्द भगवान् की जन्म शताब्दी मनाने के लिये एकत्रित हुए हैं। सारे मत मतान्तरों के अन्धकार को मिटाने वाला एवं वेद की ज्योति को जगाने वाला वही ऋषि दयानन्द था जिसने भारत को उठाया है। आप में से प्रत्येक जानता है कि महर्षि के सन्देश ने कितना काम किया है। आप में से प्रत्येक सज्जन और प्रत्येक माता जानती है कि महर्षि ने वह ज्योति जगाई है जिस ज्योति से लाखों आदमी अपने जीवन में नवीन जीवन धारण कर रहे हैं। उसी महर्षि की जन्म शताब्दी मनाने के लिये आप सव एकत्रित हुए हैं और चाहते हैं कि यहां से एक ऐसी वस्तु लेकर जायं जिससे हमारा आगामी प्रोग्राम और जीवन सुख, शान्ति और आनन्द से व्यतीत हो सके। साथ ही साथ महर्षि विरजानन्द जी द्वारा महर्षि दयानन्द को इसी नगरी मथुरा में दिये हुए उपदेश को कार्य में परिणत कर सकें। इस पाश्चात्य सभ्यता के युग

में अब से १०० वर्ष पूर्व जब बालक दयानन्द गुजरात में ब्रह्मानन्द प्राप्ति के लिये अपने हृदय के उद्‌गारों को निकाल रहा था उसी समय इंग्लैंड में स्टीफेन्सन ने दूर-दूर की वस्तुओं को निकट लाने के लिये एक नई कल का आविष्कार किया था। आज जितने रेल, तार और जहाज़ दीख पड़ते हैं वे सब इसी प्रसिद्ध पुरुष के आविष्कार के फल हैं। उसी प्रकार महर्षि दयानन्द ने (Spiritualism) अध्यात्मवाद की जो नवीन ज्योति संसार में प्रज्वलित की उसी का फल है कि आज हम अन्य बहुत-सी ज्योतियां संसार में देख रहे हैं। प्रिय भाइयो! उस नवीन ज्योति से क्या असर पड़ा है? महर्षि दयानन्द तीन पदार्थों को अनादि बतला गए हैं। ईश्वर, जीव और तत्व (God, Soul & Matter) इन्हें बड़े-बड़े तत्ववेत्ता भी अनादि मानते हैं। उन तीन बातों को हरबर्ट स्पेन्सर ने तीन नामों से पुकारा है; 1. Revolution 2. Evolution 3. Destruction. यह ससार कैसे बना? मुनष्य इस संसार में क्या करता है? इत्यादि जिन प्रश्नों को आर्य मुनियों ने हल किया था उसका आज पाश्चात्य विद्वान् समझने का यत्न कर रहे हैं। एमर्सन (Emerson) गीता को पढ़ता है और पाल रिचर्ड (Paul Richard) जैसे विद्वान् यहां आते हैं। वे आपके सामने बतलाते हैं कि अब आपने जीवन ही बदल लिया है। अब नवयुग आ गया है। अन्धकार दूर हो गया। अब इस २०वीं शताब्दी में वह युग आयेगा जो प्राचीन अन्धकार में फँसे हुए लोगों पर अध्यात्मवाद (Spiritualism) का प्रभाव डालेगा। भारतवर्ष के अन्दर भी जितने धर्म हैं वे सब धार्मिक पक्षपातों से रहित हो रहे हैं। चाहे आप कृष्ण के प्लेटफ़ार्म पर चलें, चाहे बोद्धों के , आपको पक्षपात-शून्यता ही दृष्टि आयेगी। आज "सनातन धर्म सभा" भी पक्षपात नहीं करती। यदि कुछ करती है तो यह करती है कि किस प्रकार से बाल-विवाह रोका जाय, किस प्रकार से वृद्ध-विवाह रोका जाय। आज यही प्रश्न उठ रहा है कि किस प्रकार से लोगों के हृदय मन्दिरों को वेद की ज्योति से जगमगा दें। इसी प्रकार राजनीति धर्म के अन्दर खद्दर के गीत गाये जाते हैं और महर्षि दयानन्द का गुणानुवाद होता है। जितने राजनैतिक धर्म हैं सामाजिक धर्म हैं उन सबों के अन्दर आज महर्षि

दयानन्द का काम दृष्टिगोचर हो रहा है। युरोप के अन्दर जितनी सोसायटियाँ हैं, जितने कुरान के अर्थ लगाने वाले पंथ हैं उनके अन्दर आर्यसमाज की बुद्धि से काम लिया गया है। अभी संसार के अन्दर बड़ा अधर्म फैला हुआ है। ५० वर्षों से आर्यसमाज के स्थापित होने पर भी भारतवर्ष में आज करोड़ों आदमी भूखे मर रहे हैं। लाखो विधवाऐं विलाप कर रही हैं। बाल-विवाह का दुःख दूर नहीं हुआ। अभी तक हम आश्रमों का प्रचार नहीं कर सके। अभी हमारे हज़ारों भाई एक वर्ष में ही मर जाते हैं। उनमें से 21 करोड़ आदमी इस प्लेग में मर गये। भारत में २३) की औसत आय है। आपकी ७८ फीसदी सन्तान दुर्बल हैं। आपके यहां इसका विचार तक भी नहीं है कि हमारी मातायें और बहिनें भूखी मर रही हैं। अभी लाखों, करोड़ों आदमियों की दवा दारू का समुचित प्रबन्ध नहीं है। इस काम को कौन करेगा? आपके सिवा सेवा-संघ खोलकर उनके दुःख को दूर करने वाला कौन है? वह है "आर्यसमाज" यदि उन्हें प्लेग, हैज़ा से बचाने वाली कोई शक्ति है तो आर्य-समाज है। इसीलिए महर्षि ने "सत्यार्थप्रकाश" के भीतर सब से पहिले जो सन्देश दिया है वह आर्य-संगठन है।

मित्र, इन्द्र वरुण और अग्नि को अलग-अलग मानना ग़लत है। वे सब एक ही हैं। इस जगत् का सब कुछ 'ओंकार' के अन्दर आ जाता है। जैन, बौद्ध, सनातनी सब ही "ओ३म्" को मानते हैं। अतएव संसार की समस्त जातियों, मतों और पन्थों में ओ३म् है। आज ईसाई लोग भी कहते हैं कि यह जो गिर्जा है, मिशन है, वह ओंकार का अपभ्रंश है। उसी ओंकार की सर्वत्र महिमा गाने के लिये यदि कोई धर्मोपदेश देता है तो वह "आर्यसमाज" है। "सत्यार्थ-प्रकाश" के प्रथम समुल्लास में लिखाहै कि इस संगठन के लिये आपके अन्दर प्रेम उठता है। जब आपके अन्दर प्रेम हो जायेगा तब उस ब्रह्मानन्द से भी प्रेम हो जायेगा, जिस समय आप यह जान लेंगे कि इसी ब्रह्म का असर सारे हृदय में है, उस समय मृत्यु शोक नहीं होंगे।

यह ग़लत कहा जाता है कि आर्यसमाज मुसलमानों से विरोध

करता है और इसीलिए यह शुद्धि करता है। मैं कहता हूँ कि आर्यसमाज का धर्म है प्रेम करना। यदि वह मुसलमानों और ईसाइयों को अपने अन्दर लेना चाहता है तो केवल इसलिये कि हमारा उनके साथ प्रेम है। यदि सत्य मार्ग पर लाने के लिये हम ८ करोड़ मुसलमान और ईसाइयों को मिलाने के लिये कहते हैं तो यह हमारा प्रेम है। अतः शुद्धि आन्दोलन गिराने का आन्दोलन नहीं है। महर्षि ने बतलाया है कि समस्त संसार एक 'ओ३म्' के झण्डे के नीचे हैं। आप लोग बड़े शक्तिशाली थे तब ही तो भगदत्त चीन में राज्य करता था। बर्मा, आसाम और जर्मनी में आपके 'ओ३म्' का झण्डा फहराता था।

यह दूसरा सन्देश महर्षि ने प्रीति और प्रेम का दिया है जिससे समस्त संसार में एक 'ओ३म्' के झण्डे के नीचे एकता हो। उसने आप ज़हर का प्याला पीकर आत्म-बलिदान का उदाहरण दिया है। इसी वास्ते हमारे प्राचीन ऋषियों, सुर और असुरों में बराबर युद्ध चला आता है।

हमारे पूर्व पुरुषों ने भी आत्म-बलिदान किया है, हम इस बात को सोच नहीं सकते। जिस ज़माने में राम रावण से लड़ता है, भगवान् कृष्ण सुदर्शन चक्र से शिशुपाल का वध करते हैं, हिरणयकश्यप की आज्ञा न मानकर प्रहलाद चिता में खड़ा होता है, उस ज़माने में दिशायें रक्तवर्णा हो जाती थीं। उस समय एक ओर राजपूत खड़े होते थे और दूसरी ओर मुसंलमान आते थे। राजपूत केसरिया जामा पहिन कर खड़े होते थे। उनका सिंहनाद सुनकर कायर पुरुष भी एक बार वीर हो जाते हैं। हा हन्त! आज उनकी ऐसी दशा! क्षत्रियों की प्रार्थना थी, हे भगवन्! हमें नीचों के सामने शिर नीचा न करना पड़े।" जिस समय चित्तौड़ के किले की मूर्तियां नष्ट हो गई और स्त्रियाँ चिल्लाने लगीं, उस समय एक राजपूत, जयमल से कहता है, कि "क्षत्रियों के लिये खड़ा रहना अनुचित है। मेरे लिये रणभूमि स्वर्ग है।" वहां वह जयमल को कन्धे पर लेकर जाता है और रण में मर जाता है। आज तक मेवाड़ में उसका चित्र बना है जिससे जोश उत्पन्न होता है।

जसवन्त सिंह के सेनापति ने औरंगज़ेब को सलाम नहीं किया।

अतः औरंगज़ेब ने उसे घोर दण्ड दिया। वह औरंगज़ेब के सम्मुख कहता है, "मेरा सिर तुम्हारे हाथ में नहीं है।" वह फिर कहता है, 'जसवन्तसिंह के सम्मुख झुकने वाले सिर, तुम औरंगज़ेब के सामने मत झुको। तुम इसके सम्मुख झुक कर मर्यादा को कम न करो।' मुकुन्ददास कहता है कि राजपूतों का यह धर्म नहीं है कि शत्रु को पीठ दिखा दें। अहा! ऐसे २ वीर क्षत्रिय आपकी मर्यादा को स्थिर रखने वाले थे।

जिस समय गुरु गोविंदसिंह रण में जाने लगे, उस समय उनके किसी लड़के को प्यास लगी। गुरु गोविन्दसिंह कहते हैं, 'हे कायरो! तुम जल पीने के लिये आते हो। वीरों की प्यास खून से बुझा करती है।' आप की आन और सभ्यता की रक्षा करने के लिये गुरु तेग बहादुर और अर्जुन कैसे-कैसे अनुकरणीय उदाहरण दिखला गये।

आर्य ब्राह्मणों में से मतिदास कैसे हुए। उनको आरे से चीरे जाने की आज्ञा हुई। परन्तु वह ब्राह्मण मतिदास ओम् ओम् कहता हुआ चीरा जाता है।

बल्लजी चम्पावत थोड़े से लोगों को लेकर युद्ध में जाता है, उसकी धर्मपत्नी भी साथ है। सहस्रों मुसलमानी फ़ौजों से सामना होता है। बल्लजी मारा जाता है और धर्मपत्नी पतिदेव से मिलने के लिये सती होकर स्वर्ग यात्रा करती है। वह वीर पत्नी पवन को अपने पति का शव नहीं छूने देती। किसी प्रकार देवरदे अल्हारुदर को प्रोत्साहित करता है और रण में जाता है। जिस समय हाड़ा जी मारा गया और उसकी वृद्धा माता को सूचना दी गई, उस समय वह रोने नहीं लगीं वह पूछने लगी, मेरा पुत्र मार कर मरा वा मार खाकर मरा है? सिपाही ने उत्तर दिया, 'माता जी! तुम्हारा पुत्र मार कर मरा है।' सिपाही के ये शब्द सुनकर वह बड़ी प्रसन्न हुई। कर्नल टाड साहिब लिखते हैं कि उसके स्तनों से दूध बह चला। उस समय माता कहती है, 'बेटा जाओ! तुमने मेरे दूध को नहीं लजाया।'

जिस समय जसवन्तसिंह रणभूमि से लौट आये उनकी स्त्री ने घर के सब दरवाज़े बन्द कर दिये और कहने लगी, "मैं ऐसी नहीं हूं कि भागे

हुए पति का स्वागत करूं। जब तक जिओ, तब तक रणभूमि में पीठ न दिखाओ। जब मर जाओगे, तो मैं भी सती हो जाऊंगी।"

एक बात सुनकर वीर बिदुला अपने पुत्र को क्या उपदेश देती है? जिस समय गोरक्षा से मुंह मोड़कर कुंवर लौटकर आ गया था, उस समय उसकी पत्नी ने घर का दरवाज़ा नहीं खोला। उसने कहा कि मरने से पहिले अपनी प्राणप्यारी का मुख देख लूं। तब उस पत्नी ने अपनी गर्दन काट थाली में रख दरवाज़ें पर रख दी। उसने अपने पति को रणभूमि से लौटता हुआ देखकर घर में नहीं आने दिया।

जब १२ वर्ष का बालक शलुमनरावजी युद्ध में जाने लगा तो लोगों ने उसे वहां जाने से रोका। लोगों ने कहा, "शलुमन! तुम्हारी अवस्था कम है, तुम युद्ध में नहीं लड़ सकते। तुम युद्ध में मत जाओ।" इस पर उस वीर बालक ने कहा, "भले ही मैं १२ वर्ष का हूं, परन्तु मेरी आत्मा तो १२ वर्ष की नहीं है।'

हम उस वाक्य को भूल गये जो वीर प्रताप ने कहा था। उसने कहा था, "आप लोग धर्म के लिये बलिदान हो जाओ। जिस जाति ने यह कहा था, **(This world is not meant for beggars, It is for the conquerors.)** "यह संसार भिखारियों के लिये नहीं है, वरन् विजयी पुरूषों के लिये है।" आज वही जाति पद-पद पर दुःखी हो रही है।

मैक्समूलर ने भी इस जाति की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। प्रिय भाइयो! यदि आपको यह अभिमान है कि हमारे प्राचीन लोग बड़े शूरवीर हुए तो महर्षि की शताब्दी को याद करो। आज आप का मुख मलीन और तन क्षीण हो रहा है। आप लोगों का जगह-जगह पर धर्म नष्ट किया जा रहा है, आज हमने अपना राज्य खोया, अपना गौरव खोया। अब उस वैदिक धर्म की ज्योति को जगा दो। वैदिक उपदेश को मान लो, और आपस में प्रेम बढ़ाओ। हम दयानन्द जन्म शताब्दी के उपलक्ष में धन नहीं मांगते। केवल प्रार्थना यही है कि इस वैदिक धर्म की ज्योति को जगाने की आप लोग चेष्टा करें। यह न समझ लें कि वकालत करके समय मिलेगा तो आर्यसमाज की सेवा करेंगे। ऋषि का

उपदेश है कि जो कुछ हो भगवान् को अर्पण करो।

एक समय भगवान् बुद्ध ने एक भिक्षु को एक राजा के पास भेजा। राजा ने वहुत धन दिया, परन्तु भिक्षु ने कहा कि "मैं इसका इच्छुक नहीं हूं" राजा के यहां उसने अन्न भी ग्रहण नहीं किया, और बिना भिक्षा के चल दिया। एक बुढ़िया के फटे कपड़े को लेकर उसे हृदय से लगाया और बुद्ध जी के अर्पण कर दिया क्योंकि वह वस्त्र बुढ़िया का सर्वस्व था।

अतएव आप भी धर्म को (**Surplus**) उपयोग से अधिक न समझें। उत्तम से उत्तम वस्तु को धर्म के लिये देने को तैयार रहो। तब ही आपके धर्म की उन्नति होगी।

प्यारे भाइयो! मैं आपसे पूछता हूं कि महाराज अश्वकेतु ने देश से क्या कहा था 'ऐसा राज्य स्थापित करो, स्वराज्य का ऐसा सरल मार्ग बनाओ कि इस संसांर में कोई चोर न रहे, कोई दुर्बल न रहे, कोई ऐसा आदमी न रहे, जो अग्निहोत्री न हो।" उस वैदिक समय को लाने के लिये आज से हम कटिबद्ध हो जायें। यदि आप महर्षि की शताब्दी को सफल बनाना चाहते हैं तो अपने "आत्म-बलिदान" से उस महर्षि के सन्देश (**Message**) को पूरा करें।

श्री पं० भगवद्दत् जी B.A. का व्याख्यान

तदनन्तर साम गान और फिर श्रीयुत पं. भगवद्दत्त जी रिसर्च स्कालर लाहौर का "संस्कार विधि में पठित संस्कारों" के ऊपर एक व्याख्यान हुआ। आपने बतलाया कि स्वामी जी ने संस्कार विधि मे प्रायः गृह्य सूत्रों का प्रमाण उद्धृत किया है। प्रत्येक वेद के साथ कितने ही गृह्यसूत्र हैं। परन्तु स्वामी जी ने अपने आपको प्रत्येक गृह्यसूत्र की प्रत्येक पंक्ति से बाध्य नहीं किया। जहां सिद्धान्त विरुद्ध कोई बात मिली आपने उसको छोड़ दिया। प्रक्षिप्त मान लिया। उन्होंने अपनी दिव्य ज्ञान-ज्योति से उस सच्चाई को देख लिया जो उस समय लुप्त हो गई थी। और इसी से निर्भयता पूर्वक उसका परित्याग किया था। स्वामीजी

बिना भली भांति सोचे विचारे न कुछ लिखते थे और न कहते थे। अतः यह नहीं कहा जा सका कि यों ही इसको प्रक्षिप्त कर दिया।। उनसे मुक्ति के विषय में बहुत बार प्रश्न हुए, किन्तु उन्होंने कहाः "इस विषय में मैं अपना मुंह अभी नहीं खोलूंगा। विचार करने के उपरान्त ही कुछ कहूंगा।" पन्द्रह वर्ष के विचार के बाद उन्होंने इस विचार पर अपने विचार प्रकट किये थे। उनकी कोई बात उस समय निरर्थक न होती थी। आज लोग सभी शब्दों को लेकर उनकी संगति लगाते चलते हैं। उनमें से वैदिक सिद्धान्त सिद्ध करते हैं। स्वामी जी ने कभी इसकी चेष्टा नहीं की। जो अनर्गल जान पड़ा उसे निर्भय होकर प्रक्षिप्त कर दिया एवं छोड़ दिया। आज लोग यह भी कहते हैं कि स्वामी जी के ग्रन्थों का संशोधन होना चाहिये। मैं कहता हूं कि यह क्यों ? आपको इतना भ्रम क्यों लगा है ? यदि आप ऋषि के बतलाये हुए सिद्धान्तों और सूत्रों पर विचार करें तो आपको संशोधन की आवश्यकता न पड़ेगी। कहीं-कहीं स्वामी जी ने कुछ प्रमाणों का अनुवाद मात्र ही कर दिया है। उदाहरणार्थ, कन्या के यज्ञोपवीत का विधान सप्रमाण नहीं है, वरन् गृह्यसूत्र का अनुवाद मात्र है। आप इसे वहां देख सकते हैं। उन्होंने आपस्तम्ब गृह्यासूत्र अधिकता से उद्घृत किया है। विधवा विवाह के लिए उन्होंने मुन-प्रतिपादित अक्षत-योनि विधवा विवाह की आज्ञा दी है, अन्य की नहीं। अन्यथा करने वाले को शूद्र-कोटि में डाला है। परन्तु अब तो लोग मन-घड़न्त करने लगे हैं। कहीं-कहीं यज्ञ हवन के अन्त में "ओं वसोः पवित्रमसि शतधारम, वसोः पवित्रसि सहस्रधारम..." इत्यादि के उच्चारण के अन्त में घृत छोड़ने की परिपाटी प्रचलित हो पड़ी है। इसका प्रमाण कहीं नहीं। ऋषि ने कहीं नहीं लिखा। यों ही मनमाना कर रखा है। तब इस प्रकार की परिपाटी डालकर संशोधन के प्रश्न को उठाना महा भूल है' ऋषि के सिद्धान्तों का मनन कीजिये। संस्कारो का महत्व समझिये।

श्री पं० अयोध्याप्रसाद जी (कलकत्ता) का व्याख्यान

आर्य पुरूषों एवं आर्य देवियो !

हमारे वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं। कितनी ही पुस्तकें इलहामी (खुदाई) वा ईश्वरीय बतलाई जाती हैं परन्तु यह मिथ्या कल्पना अपने मत के फैलाने के लिये ही है। सच्चे ईश्वरीय ज्ञान के भण्डार हमारे वेद ही हैं।

जिस प्रकार दयालु परम पिता परमेश्वर ने हमारे लिए इस नाना भोग विचित्रा धरित्री और विश्व का निर्माण किया है, जिस प्रकार जगदीश्वर ने इस भौतिक सृष्टि की रचना की है। उसी प्रकार उसने ज्ञान की भी रचना की है। यदि हमारे पास पीने के लिये पानी और खाने के लिये अन्न न होता तो हम इतनी सृष्टि न कर पाते। इसी प्रकार यदि ज्ञान ईश्वर दत्त न होता तो हम ज्ञानी नहीं बन सकते थे। ज्ञान की निरवच्छिन्न धारा सर्वत्र बह रही है। प्रत्येक भूत के साथ ज्ञान उपस्थित है। सृष्टि में सर्वत्र ज्ञान विद्यमान है तथा वही परमेश्वरीय ज्ञान है। भौतिक जगत को रचकर उसका ज्ञान रूप से अनुवाद स्वरूप ही तो हमारे वेद हैं। वेद कहते हैं ज्ञान को। सारा विश्व प्लेटो **(Plato)** वार्कले **(Barkley)** और ह्यूम **(Hume)** के मत से विचार ही रूप है। विचार न हो तो विश्व कहां है।

पदार्थों के गुणों का ज्ञान-भंडार ही हमारा ऋग्वेद है एवं उनसे कार्य सिद्ध करने के लिये कर्म का प्रतिपादक हमारा यजुर्वेद है। और फिर उस परमात्मा तत्व का गुणानुवाद जिसने विश्व बनाया, साम में किया गया है। ये तीनों संश्लेषणात्मक ज्ञान हैं सिन्थेटिक **(Synthetic)** ज्ञान हैं, तथा अथर्व वेद इन्हीं का विश्लेषात्मक ज्ञान है, ऐनेलिटिक **(Analytic)** ज्ञान रूप है। इसी लिए ऋग्वेद का आरम्भिक मन्त्र 'अग्नि मीले पुरोहित" अग्नि इत्यादि द्रव्यों का ज्ञान प्राप्त करे की प्रेरणा करता हुआ अन्त में कर्म की याद दिलाता है। क्योंकि ज्ञान के पश्चात् कर्म आता है। इसी प्रकार यजुर्वेद "इषे त्वोऽर्ज्जे त्वा.... से, जो कर्मपरक है, आरम्भ करके, 'कुर्वन्नेवेह कर्माणि' में ही समाप्त होता है। इसी प्रकार सामवेद कर्मो में श्रेष्ठ उपासना रूप कर्म के लिये "अग्न आष्याहि वीतयें " से आरम्भ

करता है। इस प्रकार देखने से इस सूक्त के आगे यही क्यों आया, अग्नि सूक्त के आगे वायु सूक्त ही क्यों आया; इसके भी कारण मिलेंगे। अतः इस प्रकार संश्लेषणात्मक वा सिन्थेटिक एनेलिटिक ज्ञान अथर्ववेद में वर्णित हैं। हमारे वेद ही ईश्वरीय-ज्ञान ग्रन्थमाला हैं इसमें कोई सन्देह नहीं कर सकता है।

श्री प्रि० बालकृष्ण जी का भाषण

सज्जनो!

आज संसार में विकास चल रहा है। सब उन्नति कर रहे हैं। सब तरफ़ 'आगे बढ़ो' की ध्वनि गूंज रही है। परन्तु हमारी हिन्दु जाति मरती जा रही है। इसकी वृद्धि किसी प्रकार भी होती नहीं दीखती। यह हिसाब द्वारा मालूम किया जा सकता है कि जिस क्रम से यह पहले घट रही थी उससे ५०० वर्ष में इसका पता न रह जाता। परन्तु अब जिस क्रम से घट रही है उसके हिसाब से तो यह और भी जल्द अपना नामोनिशान खो बैठेगी। ५० वा ६० वर्ष में ईसाई मत और इस्लाम की बढ़ती हुई आग में यह भस्म हो जायेगी। यह सब प्रकार घट रही है। कुछ लोग आपस के दुर्व्यवहार से जो अछूत हैं या समुद्र यात्रा कर चुके हैं, वे बिरादरी और दूसरे पचड़ो से धर्म त्याग रहे हैं। कुछ विधवाएं पड़ी हैं जो १ वर्ष से लेकर ५० वर्ष की आयु तक की हैं। इसके अतिरिक्त कितने ही लाख साधु हैं। ये सब सन्तान उत्पन्न नहीं करते। इन सब को विवाह करके प्रजावृद्धि करनी चाहिए। १ करोड़ वा १।। करोड़ तो इनके विवाह से बढ़ सकते हैं। हम को चाहिये कि अपने अन्दर की कुरीतियों का परित्याग करके पुष्ट बनें और तब जीवित रहने वाली सन्तान उत्पन्न करें, क्योंकि आज दो में से एक बच्चा तो अवश्य ही मर जाता है। इसको रोकना चाहिये। साथ ही विधवाओं और साधुओं को–मेरा आशय तमाम से नहीं है, किन्तु बने हुओं से है–विवाह करने चाहियें। यह तो भीतरी वृद्धि रही। इसके अतिरिक्त बाहर से भी अपनी वृद्धि करनी पड़ेगी। और उसका तरीका है शुद्धि।

शुद्धि सर्वदा शास्त्र-विहित हैं। ६५ लाख विधवाएं जो कनाडा की आवादी के बराबर हैं और २५ लाख साधु एक ओर वृद्धि कर सकते हैं और दूसरी ओर शुद्धि कर सकते हैं। 'सत्यार्थ प्रकाश' के दूसरे और तीसरे समुल्लास के अनुसार हमें शुद्धि करनी चाहिए। अर्थशास्त्र की दृष्टि से हमारे लिये यह परमावश्यक है कि हम साधुओं और विधवाओं की सुव्यवस्था करें। बाल-मृत्यु को यत्नपूर्वक रोकें और शुद्धि द्वारा गये हुओं को वापस लें और यदि दूसरे भी आना चाहें तो उन्हें भी लाने का यत्न करें।

श्री डा० केशवदेव जी शास्त्री का व्याख्यान

देवियो एवं आर्य सज्जनो!

जो कार्य कोलम्बस ने अमेरिका को खोज करके पूर्ण किया था, वही वेद की खोज करके महर्षि दयानन्द ने किया है। वेद पहिले विद्यमान थे, परन्तु उनके यथार्थ अर्थ लुप्तप्रायः हो चुके थे। उन्हें प्रगट करके ऋषि ने स्वाधीन "विकासवाद" का उज्वल आदर्श हमारे सन्मुख रखा। ऋषि की धारणा थी कि आदित्य ब्रह्मचारी ४०० वर्ष पर्यन्त जीवित रह सकता है। डॉ० नेवर ने फिलाडलफ़िया (Philadlaphia) में व्याख्यान देते हा कहा था कि समय आ रहा है जब लोग १०००० वर्ष तक जियेंगे १८५६ ई. में डार्विन ने विकासवाद चलाया था। १६१५ ई. में पनाम की रेसवेटरिंग कांफ्रेंस में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए डा० लूथर ने, ज एक बड़ा आविष्कारक है, और जो बिना खेती के अन्न उत्पन्न कर वाला है, कहा था कि हम चार पुश्तों में मनुष्य को बदल सकते हैं। पर ऋषि दयानन्द ने स्वरचित संस्कारविधि के २३वें पृष्ठ के नोट में लिख हैं कि संस्कारों से क्या प्रभाव पड़ता है। हमारी वैदिक सभ्यता इ विकास को बड़ी सुन्दर रीति से बतलाती है। योग दर्शन की फ़िलास में आयु की वृद्धि होती है इसके अनेकानेक प्रमाण पाये जाते हैं। ज में चम्पाराज योगी ८५ वर्ष की अवस्था का है परन्तु उसके शरीर क कान्ति से युवावस्था ही टपकती है। ४० वर्ष से लोगों ने उनको सम

(एकसा) ही देखा है। वैद्यक ग्रन्थों में लिखा है कि च्यवन ऋषि वृद्ध से युवा हुआ था, इससे आप स्वयं देख सकते हैं कि हमारा विकासवाद कितना आगे है।

ऋग्वेद में लिखा है कि प्रत्येक परमाणु को नवीन कर लो और शतायु बनो। एक वर्ष में सारा शरीर बदल जाता है यह भी वैद्यक का सिद्धान्त है।

१५वीं शताब्दी में कारनैरो जिसने वेनिस **(Venice)** की नहर बनाई थी, ४२ वर्ष की अवस्था में बीमार हुआ। लोगों ने कहा इसके बचने की आशा नहीं। परन्तु उसने अपना जीवन नियमानुसार बनाया, खान-पान का संयम किया और उत्तरोत्तर उसकी दशा सुधर गई। ६५ वर्ष की अवस्था में एक दिन १२ औंस नियत खुराक से १४ औंस कर दी। उसी दिन बीमार हुआ। तदनन्तर उसी संयम पर चला। ६५ वर्ष की अवस्था में एक पुस्तक लिखी और १०३ वर्ष तक जीता रहा। उसका कथन है कि मनुष्य की मृत्यु पके फल समान होनी चाहिए। कोई पीड़ा नहीं होनी चाहिये। बहुत-सी स्त्रियों को प्रसव-वेदना अधिक होती है। इसका कारण उनके स्वास्थ्य का दोष तथा अजीर्ण है। नियमानुसार रहने वाली स्त्री को कभी पीड़ा नहीं होती। न्यूयार्क में डा० कैरल तजुर्बे **(Experiment)** कर रहे हैं। उनके यहां एक प्रकार के रस में रखा हुआ मुंर्गी का दिल १२ वर्ष से गति कर रहा है। इसी प्रकार मनुष्य का मस्तिष्क १० वर्ष से गतिशील है।

छोटी आंत वालों को जीवन अधिक होता है। जैसे तोता १५० वर्ष जीता है। डा० एण्डर्सन ने दिखाया है कि मन की प्रवृत्ति से शरीर का भार बढ़ जाता है। तराजू पर लिटा कर तजुर्बा किया गया है कि मनोबल शिर की ओर होने से भारी हो जाता है। इस प्रकार मन की शक्ति की प्रधानता दिखाई गई है जो हमारा प्राचीन वैदिक सिद्धान्त है और योग की ज़बरदस्त फ़िलासफ़ी है।

इन वैज्ञानिक और विकास सम्बन्धी सिद्धान्तों को वेद की खोज से ऋषि ने हमारे सामने रखा है। इनमें आगे बढ़कर ऋषि ने हमें स्वतन्त्र

विकासवाद का सिद्धान्त दिया है। कोलम्बस को जब स्पेन के राज दरबार में मान मिला था तो लोगों ने पूछा था कि तुमने क्या किया है? कोलम्बस ने उन्हें बड़ा अच्छा उत्तर दिया था। इसी प्रकार ऋषि ने वेदों से कोई नई बात तो नहीं निकाली परन्तु उन्हीं सिद्धान्तों को जो वहां थे परन्तु लुप्त से थे बताया और हमारी सभ्यता का सच्चा अदर्श हमारे सामने रखा।

प्रिंसिपल श्री दीवानचन्द जी का भाषण

सज्जनो, पिछले दिनों महात्मा गांधी ने अपने पत्र 'यंग इण्डिया' **(Young India)** में आर्य समाज के प्रवर्त्तक के सम्बन्ध में कुछ लिखकर आर्यो की शक्ति को भली भांति जान लिया और तमाम भारतवर्ष ने भी प्रत्यक्ष रुप से यह जान लिया कि यह समाज भी कुछ मूल्य रखता है। महात्मा गांधी ने एक अन्य स्थान पर लिखा है, "आर्यसमाज की यह शक्ति स्वामी दयानन्द के सुन्दर आचार व्यवहार के कारण ही है।" इन्हीं दिनों लाला लाजपतराय जी ने भी एक लेख में इस बात का समर्थन किया था कि आर्यसमाज की शक्ति उस निष्काम त्याग और कष्ट सहन पर निर्भर है जो उसके अनुयायियों ने हिन्दु जाति और हिन्दुस्थान की सेवा में किये। इस समय हमारे सामने ३ प्रकार के प्रश्न हैं–

(१) क्या आर्य समाज की शक्ति दयानन्द के व्यक्तिगत आचरण पर आश्रित है?

(२) क्या यह उनकी उच्च कोटि की शिक्षा और अटल सिद्धान्तों पर निर्भर है?

(३) क्या यह शक्ति उनके त्याग भाव से की हुई सेवाओं पर अवलम्बित है?

आओ, हम इन प्रशनों की विस्तृत परीक्षा करें और देखें कि ये कहां तक ठीक हैं। यही उत्तम शिक्षा थी जिसने स्वामी दयानन्द को एक साधरण मनुष्य से ऐसा महान् पुरुष बनाया। यह वैदिक शिक्षा ही थी। आज हरेक सच्चे आर्यसमाजी का हृदय इस वैदिक शिक्षा से जीता जा

चुका है। स्वामी दयानन्द से पहिले भी वेद मौजूद थे, परन्तु लोग उनकी प्रतिष्ठा नहीं करते थे। हां, संस्कृत का इतना मान करते थे कि नाविल (उपन्यास) जैसी निरर्थक पोथी भी पूजी जाती थी। गुरु विरजानन्द ने इस अन्धकार को मिटाया जिसकी शिक्षा ने आगे चलकर हिन्दु जाति में जागृति उत्पन्न की और लोगों को सिखाया कि परमात्मा को छोड़ अन्य दूसरे के आगे सिर न झुकाओ।

पुराने तीर्थों में, कुम्भों के अवसर पर इस शताब्दी की अपेक्षा कई गुणा अधिक लोग इक्टठे् हो जाते हैं जहां पर एक समाज दूसरे समाज का साधारण विषयों पर गला काटने पर उतारु हो जाता है। स्वामी जी ने इन कुरीतियों को दूर किया और ईसाइयों की नरपूजा भी कोई कम नहीं। आर्यसमाज मनुष्य मात्र किो एक दृष्टि से देखता और सब को समान अधिकार देता है।

फिंर एक स्थान पर महात्मा गांधी ने कहा है, "आर्य समाजियों में सहनशीलता नहीं और कभी-कभी स्वामी दयानन्द भी सहन न कर सकते थे।" यह बात किसी अंश तक ठीक है परन्तु इसकी तह में एक गहरी फ़िलासफ़ी है। आर्यसमाजी और स्वामी दयानन्द अन्त को मुनष्य ही हैं पूर्ण तो नहीं हैं। असहिष्णुता के उदाहरण तो आर्यसमाज और हिन्दु जाति में खोजने पर भी नहीं मिलते। अलबत्ता, मुल्तान, अमृतसर, कोहाटं और अफ़ग़ानिस्तान के उदाहरणों को याद कीजिये। इन स्थानों पर स्वतन्त्रता और वीरता के पवित्र भावों को एक ओर भुलाकर सहिषुणता के नाम पर धब्बा लगाया गया। आरम्भ में मुसलमानों ने वे निर्दयता पूर्ण अत्याचार किये कि उनका वाणी से वर्णन नहीं हो सकता। इटली **(Italy)** के बादशाहों ने ईसाइयों का वह खून पिया कि उसको ईश्वर ही जानता है। भारतीय इतिहास में कहीं एक तो ऐसा उदाहरण उपस्थित कीजिये।

स्वामी जी की असहिष्णुता वास्तविक और यथार्थ थी। वे लोगों से क्रुद्ध नहीं होते थे वरन् उनके आचरणों पर होते थे। इसी प्रकार आर्यसमाज भी अन्य मतों पर आपत्ति नहीं करता किन्तु उनके आन्तरिक

दुर्व्यवहारों पर करता है।

अब महात्मा गांधी के कथन को लीजिये। स्वामी दयानन्द के जीवन (चाल-चलन) में वे बहुमूल्य बातें थीं जिन्हें आपको अपने जीवन में घटाना चाहिये। शिवरात्रि में उनके हृदय में शंका उत्पन्न होती है जब तक निर्णय नहीं होता आत्म-सन्तुष्टि नहीं होती। मूर्ति एक जड़ पदार्थ है और चूहा एक चैतन्य जीव। इस सचाई की खोज में स्वामीजी आत्मत्याग के लिये तैयार हो गये और अपना सारा जीवन वेदों की शिक्षा के उपार्जन तथा प्रचार में लगा दिया। यह एक गुण था।

स्वामी जी अपने गुरु का वह सम्मान करते थे जिसका कि हम स्वप्न में भी ध्यान नहीं ला सकते। एक दिन गुरु विरजानन्द के बहुत पीटने पर अपने गुरु के दुर्बल शरीर और क्रोधी स्वभाव पर दया कर, हाथ जोड़ निवदेन किया, "स्वामिन्! आप जब मुझसे नाराज़ हुआ करें तब किसी से मुझे पीटने के लिये कह दिया करें, मुझे पीटते हुए आपके कोमल हाथों में कष्ट होता होगा।

तीसरी बात जो हम उनके जीवन में देखते हैं "निर्भयता" है। आप कुम्भ के मेले पर जाते हैं। करोड़ों यात्री पहिले स्नान करने के लिये लड़ रहे हैं। आप एक कोने में जाकर अपनी 'पाखण्ड खणिडनी पताका' गाड़ देते हैं। क्या इससे अधिक निर्भयता कोई हो सकती है? उनके जीवन में सैकड़ों ऐसी मिसालें मिलती हैं। जिनको पढ़कर हम दंग हो जाते हैं कि ऐसे समय में भी भारत माता ऐसे सुपुत्र उत्पन्न कर सकती है।

एक बात और थी कि सच्ची बात कहने तथा धर्म के प्रचार करने में वे किसी राजा तक से भी न डरते थे। आप जयपुर गये। वहां के राजा ने कहा, "आप पुरणों के विरुद्ध न बोलें।" स्वामी जी ने कहा, मैं आपके राज्य को तो छोड़कर दो दिन में बाहर हो जाऊंगा परन्तु परमेश्वर के राज्य से किस प्रकार बाहर हो सकता हूं।"

जोधपुर के राजा भी एक बाज़ारी औरत के हाथ में थे। आपने एक दिन यह बात देखी और डांटकर बोलें, "क्या शेर राजा इन कुतियों से सिंह पैदा कर सकते हैं?" यदि आज दयानन्द होते तो भारतीय राजाओं

का अपमान इस प्रकार न होता जैसा कि अब हो रहा है।

इन्हीं बातों पर आर्य समाज की शक्ति स्थिर है। कल एक भाई ने कहा, "समय पर समाजियां में जोश तो अवश्य आ जाता है, पर अच्छा हो कि यह उत्साह सदा बना रहे।" इस समय तक आर्य समाज ब्राह्मणों का काम करती रही है। अब वह काम समाप्त हो गया। अब क्षत्रियों के काम की बारी आई है। क्षत्रिय बनो और क्षत्रिय पैदा करो। अपनी तथा अपने देश की रक्षा करो। वेदों में शस्त्र विद्या वर्णित है। इस दृष्टि से तो योरोप वाले ही अधिक वैदक धर्मी हैं। आप नहीं हैं। यह सेवा आपके सुपुर्द है। खेद की बात है कि ऐसे देश के रहने वाले जिसके चारों ओर रूस, चीन, जापान और अफ़गानिस्तान जैसी शक्तियां विद्यमान हों समुद्र का मार्ग खुला हो, अपनी भी रक्षा न कर सकें।

आर्यवीरों आओ! हथियार उठाओ! यदि आज आप क्षत्रिय होते तो मुलतान, मलाबार और कोहाट की, हृदय-विदारक घटनाएं न होती। खलीफ़ाओं का समय गया। कमालपाशाओं का समय आ पहुंचा है। यदि आप वीर न बनोगे तो अन्य कौमों की खुराक बन जाओगे। अपनी स्त्रियों की रक्षा करो। **Self-difience,** आत्मरक्ष पहला कर्त्तव्य है। सिक्खों में यह वर्त्तमान हैं और आज दुनिया में उनका बहादुरी का डंका बज रहा है।

वे आपकी अपेक्षा अधिक शक्तिशाली हैं। आपके हाथों में कमज़ोर कलम हैं। उनके हाथों में तलवार की शक्ति है। अतः मैं आप से यही निवेदन करना चाहता हूं कि आप हिन्दु जाति की रक्षा करना चाहते हैं तो आप हिन्दू जाति को बहुत जल्द वीर बनाइये।

श्री भाई परमानन्द जी का व्याख्यान

भाइयो और बहनो! बहुत दिनों से मेरी व्याख्यान देने की श्रद्धा नहीं बढ़ी मैं सोचता था कि मुझे आपके सामने खड़ा होना चाहिये या नहीं। मगर मेरी आत्मा के ऊपर एक बोझ था जिसका उतारना आवश्यक था। अगर मैं न बोलता तो पाप का भागी बनता। जितने भाई और बहन इस

उत्सव मे सम्मिलित हुए हैं वह विविध उद्देशयों से आये हैं। कोई खेल के लिये, कोई सैर के लिये, कोई व्याख्यान सुनने के लिये। परन्तु आये हम सब उसी ऋषि की शताब्दी मनाने के लिये हैं, अब हम धर्म पर कुछ विचार करेंगे। प्राचीन काल के इतिहास को देखिये, जब देश का अधः पतन आरम्भ हुआ तब सब वेद के मानने वाले थे। फिर यज्ञ का युग प्रारम्भ हुआ। लोगों की यज्ञ में श्रद्धा बढ़ी उसका बहुत प्रभाव बढ़ा। इसके बाद बौद्ध मत का बहुत दौर-दौरा हुआ। महात्मा बुद्ध ने एक प्रकार के यज्ञों के विरुद्ध युद्ध किया और लोगों को शुभ कर्मों के साधनों से भी मुक्ति दिलाई। महात्मा बुद्ध ने अपने प्रचार के लिये संघ स्थापित किये। ये भिक्षुक बन कर जंगल में बसते और धर्म प्रचार करते थे। बौद्ध धर्म के पश्चात् दार्शनिकता। पर धर्म की स्थापना की और बौद्ध धर्म को निकालने की कोशिश की फिर तलवार का ज़ोर हुआ और मुसलमान बनाने के लिये तलवारें चलीं। इन दिनों बहुत से आदमी निकले। तुकाराम, भक्त तुलसीदास आदि ने हिन्दु धर्म की जड़ों को सुदृढ़ बनाया। उन दिनों हज़ारों हिंदू मारे जाते परन्तु इस्लाम स्वीकार न करते। अन्त में एक ऐसी लहर उठी जिसने हवा और सूर्य के झगड़े की तरह काम किया। हवा कुछ न कर सकी और सूर्य ने धीरे-धीरे सब कुछ कराया, अर्थात् इस्लाम जिस हिंदु जाति को दूर न कर सका उसे ईसाइयों ने पश्चिमी सभ्यंता से दूर करना प्रारम्भ किया। जनेऊ टूट गये, चोटियां कट गयीं। स्वामी दयानन्द ने इसका इलाज किया। बहुत से इलाजों में से एक इलाज यह था कि आर्य समाज की स्थापना की, इन सब प्रयत्नों के अन्तर्गत एक भाव था, वह यह कि देश धर्म का उद्धार कैसे हो? उन्होंने संस्कार और तर्क पर जोर दिया। इस समय मेरे हृदय में एक विशेष बात है जिसे निवेदन करता हूं। कोहाट में आर्य, सनातनी आदि सब रहते थे। हिन्दुओं की चार-पांच हज़ार की आबादी थी। वह सब आज अपने शहर को छोड़कर दूसरे शहर में हैं। इस समस्या की पूर्ति करनी है और सोचना है कि हम देश धर्म को कैसे स्थिर रख सकते हैं। महात्मा गांधी अभी इस घटना के सम्बन्ध में रावलपिंडी गये थे।

वहां के मुसलमानों को भी निमन्त्रित किया था। मगर वह मुसलमान जो सरकार के साथ बातचीत करते थे न आये, परन्तु जो उपद्रव के कारण समझे जाते थे, वे आये। महात्मा जी के साथ बातचीत करने से मालूम हुआ कि लड़ाई का मूल कारण 'कृष्णा-सन्देश' नामक पुस्तक न थी—अपितु यह बात थी कि मुसलमान हुए लोगों को वापिस लेने के लिये उन्हें शुद्ध करते हैं। वहां पर उन्होंने बतलाया कि डेढ़ सौ नर-नारी प्रतिवर्ष मुसलमान बनते थे। महात्मा जी ने पूछा कि स्त्रियों को किस प्रकार मुसलमान बनाया जाता है। उत्तर मिला कि जो विवाहित होती है, मुसलमान होने के बाद उनकी पहली शादी मंसूख़ हो जाती है। महात्मा जी ने रात भर सोच कर बतलाया कि इस बातचीत से उनके आत्मा में एक परिवर्तन पैदा हो गये है। उपद्रव के पूर्व मुसलमानों ने हिंदुओं का इसी कारण बहिष्कार कर दिया था। मैं कहता हूं कि मेलमिलाप हो, स्वराज्य हो, अवश्य हो। परन्तु मैं देखता हूँ कि एक बात मुसलमानों के हृदय में काम करती है, कि सब को मुसलमान बना लें। लाहौर में कई मुहल्ले ऐसे हैं जहां कि कई बार मुसलमानों ने हिन्दु स्त्रियों को छिपाये रखा। एक जगह पता लगा तो दूसरी जगह ले गये। आर्य समाज का गौरव तभी बढ़ सकता है जब वह हिन्दु जाति की रक्षा का भार अपने ऊपर ले। आर्य समाज हिन्दु जाति की रक्षा के लिये बना है। स्वामी दयानन्दं ने इसी डूबती नैया को बचाया था। इस बात के लिये उन्होंने सब कुछ बलिदान कर दिया। अगर आर्य समाज ऐसे करेंगे तो इससे स्वामी दयानन्द और स्वामी विरजानन्द जी की आत्मा का मिशन पूरा होगा। आप इससे सहमत न हों परन्तु मैने अपने हृदय का भाव आपके सम्मुख रख दिया है। अगर कप्तान अच्छा हो तो वह जहाज़ को तूफ़ान से निकाल लेगा। अगर न निकाल सकेगा तो जहाज़ के दूसरे यात्रियों के साथ वह भी डूब जायेगा। यही हाल आर्यसमाज का है। ऋषि दयानन्द का मिशन तब पूरा होगा जबकि सच्चे क्षत्रिय, सच्चे ब्राह्मण और सच्चे देशभक्त पैदा होंगे। कोहाट के उपद्रव में कई आदमियों ने सच्चे क्षत्रियों की भांति काम किया। एक काहनसिंह ने चार् पांच घण्टे

अकेले सारे मुहल्ले को बचाये रखा। बाद को पकड़ कर मार दिया गया। एक स्त्री ने अपने घायल पति की रक्षा की और तब तक जाने से इन्कार किया जब तक उसे लाया न जा सका। इसी तरह आज हमारा प्रधान कर्तव्य आत्म-रक्षा होगा। अगर आर्यसमाज कर्तव्य सिखलायेगा तो वह हिन्दु जाति का प्रधान अंग बन जायेगा। शताब्दी के पवित्र अवसर पर धर्म को बचाओ। धर्म को बचाइये, वह आपकी रक्षा करेगा। अन्त में भाई जी ने स्त्रियों से प्रार्थना की कि वे अपने आपको और अपनी पुत्रियों को इस काम के लिये तैयार करें।

श्री महात्मा हंसराज जी का भाषण

देवियो तथा प्यारे भाइयो!

आज का दिन बड़ा शुभ है। आज जो प्रसन्नता मुझे हो रही है उसे मैं छिपा नहीं सकता। यद्यपि यह बड़ा कठिन काम है तथापि हमारा कर्तव्य है कि हम आर्यसमाज के आन्दोलनों को देखें। उन पर विचार करें और भविष्य के कार्यक्रम के विषय में अपने विचार स्थिर करें।

आर्यसमाज की आधारशिला एक बड़े व्यक्ति पर रखी गई है। मुझ से कहा गया था कि मैं समाचारपत्रों द्वारा स्वामी जी विषयक अपने विचारों को जनता के समक्ष रखूं, परन्तु यह सम्भव न था, अतः न हो सका। लोग अब तक स्वामी जी तथा उनके मिशन को नहीं समझे। बहुत से तो कहेंगे कि स्वामी जी में कोई चमत्कार नहीं था अतः वे बड़े आदमी नहीं थे। परन्तु आर्यसमाज तो स्वयं उनको मानवता से ऊपर अवतारादि कुछ नहीं मानता, न उन्हें किसी धर्म का प्रवर्तक समझता है। वह तो उस महान् पुरुष को वैदिक धर्म का एक सच्चा उपदेशक समझता है और समझता रहेगा। उन्होंने वेदों का पठन पाठन किया और निश्चय किया कि वे ईश्वरीय ज्ञान के भण्डार हैं। उनके अर्थ लोगों के सामने रखे। लोगों ने पूछा, "ऋषियों में आपका कौन सा स्थान होना चाहिए"? वे इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि ऋषि काल में तो शायद कोई मुझे ऋषि भी न कहता! आर्य समाज ऋषि को रसूल वा पैग़म्बर

नहीं मानता, न यह कि उनके द्वारा मुक्ति मिलेगी। यह भाव तो केवल हमारे मुसलमानों और ईसाई भाइयों में हैं।

दयानन्द हमारे धर्म के सच्चे रक्षक थे। उन्होंने धर्म को बचाया। उनके नाम की जय बोलने और समाज का सभासद बनने से ही कार्य सिद्ध न होगा। इसके लिये स्वयं सदाचारी और संयमी बनना पड़ेगा। हमें स्वार्थ-त्याग, देश-सेवा, समाज-सेवा और जाति-सेवा के भावों का अपने में समावेश करना पड़ेगा जैसे कि ऋषि ने किया। गद्दी पर लात मारी, धन की परवाह न की, वेद का प्रचार किया, ईटें खाईं, गाली खाईं परन्तु दृढ़ रहे। उन्होंने जाति-सुधार, देश-सुधार, धर्मोद्धार और आप सब के लिये ही सब कुछ किया। स्वामी जी से उनके कुल कुटुम्ब का नाम पूछा गया परन्तु उन्होंने केवल रियासत का ही नाम बतलाया। उन्हें इसका भय था कि मेरी मृत्यु के बाद घर वाले मठधारी न बन जायं और पूजा न होने लगे। उन्होंने मान मर्यादा की बलि चढ़ा दी और इन्हीं त्यागों का फल आज आपके सामने है। राव राजा तेजसिंह जी के कथनानुसार उन्होंने प्राचीन ग्रन्थों का प्रचार और मान किया।

उन में अपूर्व शक्ति थी। वे बड़े बलवान् थे। उनका यह विचार नहीं था कि योगी को पतला दुबला और निकम्मा होना चाहिये और साधुओं की नाईं उनकी यह धारणा नहीं थी कि परमात्मा के मार्ग में लगे हुए योगी का संसार से कोई सम्बन्ध नहीं। वे समझते थे कि योगी का देश जाति और संसार के हित के लिये, सत्पथ का उपदेश करना परम कर्तवय है।

सज्जनो! आर्य समाज की तह में उसी का व्यक्तित्व है। उसके आदेशानुसार चलने से आर्य समाज सदा फलता फूलता रहेगा। उसी व्यक्ति के महत्व के कारण आर्य समाज में और कई विशेषताएं हैं। सब से बड़ी विशेषता यह है कि वह अपना आदर्श बुद्धिवाद पर रखता है। उसने बतलाया कि परमात्मा ने वेद और संसार को रचा है। वैदिक ज्ञान परमेश्वरीय ज्ञान है। उस ज्ञान और सृष्टि-क्रम में कोई भेद नहीं है और यही धर्म की बड़ी कसौटी है। इस्लाम और ईसाई धर्म इस कसौटी पर

ठीक नहीं उतरते। मज़हब के नाम पर उन्होंने बड़े-बड़े अत्याचार किये। उन्होंने पृथ्वी को गोल और सूर्य को परिक्रमा करने वाली बताने वालों पर जुल्म किये। उन्हें जेलखाने भेजा। इस्लाम का यकीदा है कि मजहब में अक्ल को दख़ल नहीं। वह मौअज्जज़े आदि मानता है। चन्द्रमा के अंगुली से टुकड़े-टुकड़े हो सकने पर उसे विश्वास है। यह बात विज्ञान से सर्वथा असम्भव है। परन्तु वेद के सृष्टि-क्रम और विज्ञान में कोई भेद नहीं है।

आर्य समाज का जहां धर्म-प्रचार और वेद-प्रचार कार्य है वहां विज्ञान को भले प्रकार समझना, सृष्टि क्रम का जानना और विद्याप्रचार भी इसका मुख्य कर्तव्य है। हमारा सिद्धान्त है कि विद्या का प्रचार और अविद्या का नाश करना चाहिये। इसी सिद्धान्त पर स्कूल, कालिज पाठशालाएं और गुरुकुल भी खोले गये हैं। इनमे अकेला पंजाब ३५ हजार छात्रों को शिक्षा दे रहा है। यदि आप "सत्यार्थ प्रकाश" पढ़ेंगे तो इन सब विषयों को विशद रूप से जान लेंगे।

गीता में लिखा है कि क्षत्रिय युद्ध से न भागे परन्तु स्वामी जी ने बतलाया कि क्षत्रिय का धर्म युद्ध से न भागना है परन्तु यदि भागे बिना प्राण रक्षा सम्भव न हो तो भाग कर प्राण संरक्षण भी क्षत्रि-धर्म है। ऋषि प्रत्येक बात को शास्त्रोक्त प्रमाणों से सिद्ध करके मानते थे। उन्हें अधूरी बात पर विश्वास न था। उन्होंने कहा कि प्रत्येक प्राणी को उचित है कि अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न होकर सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझें। इसके लिये उन्होंने जनता को बलिदान का उपदेश दिया और फलतः स्वयंसेवक के रूप में आर्य समाज कांगड़े के भूचाल में और मालाबार में पीड़ितों की सहायता करने के लिये गया और जान को जोखम में डालकर काम किया। जिस समय मालाबार में मुसलमान हिन्दुओं के सिर काट कर कुओं में डालते थे उस समय म० खुशहाल चन्द्र जी ने तथा अन्य पुरुषों ने कैसा आश्चर्यपूर्ण कार्य किया। पीड़ितों को भोजन पहुंचाया। एक हज़ार मुसलमान हुए हिन्दुओं को फिर से वापस लिया। कांगड़े में कालेज के विद्यार्थियों ने दबी हुई स्त्रियों को

निकाला। कोहाट में की हुई सहायता भी किसी से छिपी हुई नहीं है। इन चालीस वर्षो में अभी एक कार्य नहीं हुआ और वह है कोढ़ीखाना खोलना। वह भी आपके त्याग से होना चाहिये। ऋषि ने प्राणिमात्र को वेद पाठ का अधिकार दिया। समाज को उच्च और विशाल बनाया। वेद प्रचार का भार आपको सौंपा गया। आपका धर्म है कि आप उसके आदर्श को पूरा करें।

श्री पं० चमूपति जी का व्याख्यान

देवियो और भद्र पुरूषो!

मैं तो मथुरा नगरी में शिष्य रूप से आया था न कि इस वेदी पर खड़ा होकर व्याख्यान देने के लिये। मैं तो यह विचार मन में रखकर आया था कि अब गुरु की नगरी में चलता हूं। वहां पद-पद पर शिक्षा ग्रहण करुँगा और उन शिक्षाओं को अपने जीवन का आधार बनाकर घर को लौटूंगा। परंतु अब यह कार्य सौंपा गया है कि इस वेदी पर खड़ा होऊँ। मैं लिखने का प्रयत्न कर अपने को उपदेशक नहीं बना सकता। मेरे हृदय का इस समय वही भाव है जो इधर उधर प्रचार करके अपने माता पिता के घर पर पहुंचने वाले व्यक्ति का होता है। मैं लाखों बार उपदेशक बनने का विचार करता हूं परन्तु बन नहीं पाता। यह वही स्थान है जहां मैंने उपदेश ग्रहण किया और हमारे गुरु ने उपदेश दिया था। यह स्थान कृष्ण का समझा जाता है। जब यहां कंस राजा था तब यहां की प्रजा दुखी थी और प्रजा के कष्ट निवारणार्थ एक तंग कोठरी में कृष्ण ने जन्म लिया था। वे बृजपाल थे। लोगो के ऊपर होने वाले बलात्कारों और अत्याचारों को दूर करने के लिये उनका जन्म हुआ था। मुरली द्वारा स्वाधीनता के सन्देश की सुमधुर ध्वनि में गुञ्जायमान करने के लिये उनका जन्म हुआ था। वह ध्वनि कुरुक्षेत्र में गूंजी थी। उसने रुद्र रूप धारण किया और पापों को नाश किया। कृष्णा को ब्रजपाल कहा जाता है और इसलिए कहा जाता है कि उन्होंने मथुरा में जन्म लिया है। आज का समय इसलिए नहीं है कि कृष्ण पर कुछ विचार किया जाय क्योंकि यह पुराना स्वप्न हो गया और इसे कई प्रकार से लाञ्छित किया

जा चुका है। लोगों ने प्यार करते करते अपने प्यारे को प्यार के योग्य नहीं रखा। श्रीकृष्णा ने पहला जन्म लिया तो स्वामी दयानन्द ने दूसरा जन्म लिया और संसार मे दूसरा जन्म असली जन्म है। कृष्ण ने अपनी माता के गर्भ से जन्म लिया तो स्वामी दयानन्द ने अपने गुरू से जन्म लिया। शास्त्र में लिखा है कि जव लड़का गुरूकुल में प्रवेश करता है तव आचार्य उस को उसी प्रकार लेता है जिस प्रकार माता अपनी गोद में लेती है। यदि श्रीकृष्णा ने जेल में जन्म लिया तो स्वामी दयानन्द छोटी सी कोठरी में पैदा हुए। अन्धेरे से रोशनी का जन्म होता है। रात में से दिन का उदय होता है। उसी प्रकार तंग कोठरी से प्रकाश होता है। वेद में लिखा है कि आत्मशक्ति का जन्म आग की भट्टी में से होता है।

जव स्वामी जी पाठशाला में थे तव उन्हें झाड़ू देने का काम सौंपा गया था। उन्होंने गुरू की कोठरी में झाड़ू दी और संसार को शिक्षा दी कि वह भी झाड़ू दें। गुरू विरजानन्द समझते थे कि वही झाड़ू संसार की कुरीतियों को बुहार देगी। यह वही स्थान है जहां ऋषि दयानन्द पानी भरकर लाते थे और गुरु को स्नान कराते थे। आज उनकी वहाई हुई यमुना में समस्त संसार स्नान करता हुआ दीख पड़ता है। आज हम को यह दिखाना है कि यह स्थान एक समुद्र है और लोग इसमें बहे चले जाते हैं। कृष्ण ने अपना जीवन लीला में विताया था। ऋषि दयानन्द ने अपना समय भट्टी में बिताया था।

स्वामी दयानन्द के आने के पूर्व सव ऋषियों ने समझा था कि हमें काम नहीं करना है। स्वामी दयानन्द ने कहा कि वेद में लिखा है कि आत्मा कर्म करने के लिए है और वह कर्म करते-करते जायेगा। स्वामी दयानन्द के जीवन से यदि कोई शिक्षा मिलती है तो वह यह है कि आत्मा कर्म करते-करते जाता है। स्वामी दयानन्द का जीवन कर्ममय जीवन है।

प्रोफ़ेसर मैक्सूलर एक स्थान पर धर्मों व मतों का विभाग करते हुए कहते हैं धर्म के दो रुप हैं एक प्रचारक धर्म और दूसरा अप्रचारक। मिश्नरी का धर्म प्रचारक धर्म है? संसार में जो फिर जन्म लेता है वह

समझता है कि संसार पर अपने धर्म की ज्योति डाल दे। अप्रचारक धर्म वह है जिसके अनुयायी यह चाहें कि हमारे धर्म का संसार में प्रचार न हो। प्रोफ़ेसर मैक्समूलर लिखता है 'ईसाई और इस्लाम ही प्रचारक धर्म हैं। बोद्ध और हिन्दु धर्म अप्राचरक धर्म हैं। वैदिक धर्म भी अप्रचारक है।

यदि स्वामी दयानन्द के उपदेशों को हम छोड़ देते तो सचमुच हमारा धर्म अप्रचारक धर्म था। हम कहते थे, हम दया करते हैं, परन्तु दया का स्वरूप नहीं जानते थे। आज आर्य जाति का बच्चा-बच्चा जानता है कि जो हिन्दु मुसलमान हो गया हो उसे हम अपनी जाति में पुनः ले सकते हैं। बात यह है कि लोगों ने धर्म के स्वरूप को शुद्धि के स्वरूप में नहीं पहिचाना इसका स्वरूप समझा है मौलाना मुहम्मदअली ने। कोकनाडा कांग्रेस में उन्होंने कहा था कि हिंदू और मुसलमानों में केवल इतना ही भेद है कि 'मुसलमान एक हंडिया पकाते हैं। वे बड़े से आदमी को इसमें से खिलाना चाहते हैं। वे सब इस विषय में एंक हैं। विपरीत इसके हिंदू समझता है कि उसने एक बड़ा चौका तैयार कर लिया है और उस के भोजन पर हरेक ही दृष्टि नहीं पड़ सकती है।" हम यह समझते हैं कि मुसलमान को मुसलमान रहने दें। ईसाई को ईसाई रहने दें। असल में हम आलसी थे। हम **Struggle** में आने से डरते थे। स्वामी दयानन्द आया। उसने अपने नाम को सार्थक किया। दया को क्रिया का रूप दिया।

बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ राजकुमार चीन में गया था, बर्म्मा में गया था, परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि आज बौद्ध धर्म को भी अप्रचारक धर्म कहा जाता है। स्वा. दयानन्द आये और उन्होंने वेद के शब्दों में नाद बजाया और कहा कि हमें सब को आर्य बनाना है। ऐसे नहीं जैसे कि मौ० ख्वाज़ा हसन निजामी चाहते हैं। आज स्वामी दयानन्द का नाम लेते हैं तो उनके जीवन की क्रिया मालूम हो जाती है कि किस प्रकार उन्होंने अपने मत को फैलाया था।

जिस दिन मैं लाहौर से रावलपिंडी आया उस दिन लोगों ने मुझसे कहा, कि यह वही स्थान है जहां स्वामी दयानन्द भटकता था और लोग

उसे बैठने नहीं देते थे। यह वही स्थान है जहां पर लोगों ने ईंट पत्थरों से स्वामी का स्वागत किया था। अब लोग उसे खोजते हैं परन्तु वह नहीं मिलता है। आज वह दिन है कि जिस दिन संसार बदला है। ज़मीन आस्मान बन गई है और आस्मान ज़मीन बन गया है। आज लोग कहते हैं, "स्वामी दयानन्द! आओ और अपने चरणों से हमारी आंखों को तृप्त करो।" लाहौर में जगह नहीं मिलती थी। एक मुसलमान भाई ने जगह दी थी। जिस मसय मैं लाहौर के मुसलमानों का विचार करता हूं तो सब से पहले रहनुमाखां का ध्यान आता है। सब लोग कहते हैं कि यह वही मुसलमान है जिसने स्वामी जी से अपने मकान के पास ठहराने को कहा था। उस समय मैं मुहम्मदअली का नज़ारा भूल जाता हूं। मैं उसका बड़ा कृतज्ञ हूं। स्वामी दयानन्द उस मुसलमान के कोठे पर जा उतरे। रात्री में लैक्चर होना है, विषय है "कुरान का खंडन"। आवाज़ उठती है। "विचित्र प्रकार का आदमी है।" पौराणिक अपने घर में स्थान नहीं देते हैं, ब्रह्मसमाजियों ने भी उसे अपनी वेदी से नीचे उतार दिया है, बड़ी कृपा से रहनुमा ने स्थान दिया है उस उपकार का बदला यह है कि स्वामी कुरान का खंडन करता है।" स्वामी दयानन्द कहता है, "इसमें सन्देह नहीं कि जब मुझे कहीं स्थान न मिला तब रहनुमाखां ने अपने घर में बसाया और सहायता के लिये आसन बिछाया। मैं भी उसे मानता हूं। परन्तु मैंने तो घरबार छोड़ दिया है, आकाश की छत के नीचे बसेरा करता हूं, समस्त पृथ्वी मेरा घर है। कुछ दे नहीं सकता हूं। रुपया नहीं; मान नहीं, राज्य नहीं। मैं क्या दे सकता हूं? एक चीज है जिसके लिये माता की तपश्चार्या को पीछे छोड़ा। पिता के प्रेम को छोड़ आया हूं। मित्रों की मित्रता को त्याग आया हूं। अनाथ हो गया हूं। अकिंचन हो गया हूं। जंगलों में फिरता हूं। पहाड़ों में फिरता हूं। झाड़ियों के अन्दर कांटों को लांघ कर फिरता हूं। किस लिए? एक सत्य की खोज के लिये। किसी ऋषि के विषय में सुनता हूं कि जंगलों में रहते हैं और वहीं पहुंचता हूं।"

एक स्थान पर एक पादरी स्वामी जी का भक्त बन गया है। वह

गिर्जा में उनकी प्रार्थना किया करता है। एक ईसाई पादरी स्वामी दयानन्द के चरणों में गिरता है और उसका नाम पड़ता है भक्त स्कौट। वह प्रति दिन आता है। एक दिन स्कौट भक्त नहीं आया। क्यों नहीं आया? आज रविवार है। एक दिन ऋषि दयानन्द गिर्जा में जाता है, और वहां उपदेश बन्द हो जाता है। स्वामी जी को उपदेश देने के लिये खड़ा किया जाता है। वह उपदेश देते हैं। वह उपदेश क्या है? वेद कहता है कि सारे संसार को आर्य बनाओ।

दूसरे धर्मो ने अपना-अपना प्रचार किया। किसी ने तलवार से और किसी ने धन से। स्वामी दयानन्द ने धर्म के मार्ग से किया। वह अधम के मार्ग से नहीं कर सकते थे। यह क्रियात्मक उपदेश है। आज तो राजनैतिक क्षेत्र में उपदेश दिया जाता है कि यदि धर्मोपदेश होगा तो मतभेद उत्पन्न होगा। आप विचार करें कि इतना झगड़ा बढ़ गया है अतः हमें उदारं बनना आवश्यक है। स्वामी दयानन्द के आने से पहले आर्यों की आंखें नीची थीं। स्वामी जी ने उन्हें ऊंचा कर दिया।

हम आज मथुरा नगरी में शिष्य भाव से आये हुए हैं। अतः यह विचार लेकर जायं कि ऋषि सारे संसार के लिये था। हम भी समस्त संसार के हो जायें। भारत के लिये ही नहीं, एशिया के लिए ही नहीं।

एण्ड्रयूज़ लिखता है कि फिजी, मौरीशस और इंग्लैण्डादि द्वीपों में स्वामी का नाम रोशन है। इससे मैं समझता हूं कि उसका नाम सार्वभौम होने वाला है। अब आर्यों का यह कर्त्तव्य हो गया है कि वे अपने जीवन को प्रचार के अर्पण कर दें और जियें तो इसलिये जियें कि वेदों के सन्देश का प्रचार करना है। जब मुसलमान मेरी आंखों के सामने आते हैं तब मुझे उनके अगुआ रहनुमां खां की याद आती है और जब ईसाई सामने आते हैं तब भक्त स्कौट की याद आती है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि लोग इसी प्रकार लोगों का उपकार करते हुए ईश्वर के भक्त बनें।

श्रीमती डा० दमयन्ती देवी जी का व्याख्यान

पूज्य माताओ एवं पूज्य भाइयो!

इस समय आवश्यक न था कि मैं खड़ी होकर आपके सन्मुख अपने विचारों को प्रगर करुं। मेरे एक भाई ने अभी आप लोगों से आज के खेल तमाशों के स्थगित होने के विषय में कहा है तथा साथ ही साथ स्त्रियों से प्रार्थना की गई है कि वे भी आज कुछ काम करें। अतः मैंने भी आपके कानों तक कुछ शव्द पहुंचाने का साहस किया है। मेरा तात्पर्य मेरी माताओं से है। आप जानते हैं कि जव संसार में कोई राष्ट्र उन्नति करने लिए लालायित होता है उस समय वह अपनी कमज़ोरियों पर विचार किया करता है। उस संमय विचार उत्पन्न होता है। कि हमारे पतन का क्या कारण है? वैद्यक शास्त्र में किसी व्यक्ति के रूग्ण हो जाने पर रोग का निदान ही प्रधान माना जाता है। आज कल लोग निदान किये बिना ही चिकित्सा करना आरम्भ कर देते हैं। जिसका फलस्वरूप रोग-वृद्धि हो जाती है और अन्त में जिस समय वे डाक्टरों के पास पहुंचते हैं उस समय डाक्टर लिख देते हैं Remove the cause कारण को दूर करो। आप लोग व्याकुल न हों, मैं डाक्टरी के विषय में व्याख्यान देने नहीं खड़ी हुई हूं। जव मनुष्य-रक्षा के लिये एवं शरीर को सुख देने के कारण खोजना परमावश्यक है, तब क्या उस देश की रक्षा के लिये जो चिरकाल से रूग्ण है, इसके रोग का निदान जानकर उपाय सोचना आवश्यक नहीं है? यदि इसके रोग ग्रसित हो जाने पर कोई योग्य डाक्टर इसके रोग का कारण ढूंढने के लिये तन, मन और धन से कटिबद्ध हो जाता और उसके दूर करने में अपनी बलि दे देता, तो आज इसकी ऐसी बुरी अवस्था न होती और हम लोग इस पाखंड नगरी मथुरा में न आते।

हमारी हिन्दु जाति का नाम मिट रहा था। उस समय ऐसा डाक्टर आता है जो हमारी नाड़ी देखकर हमारे मुर्दा पड़े रहने का कारण जान लेता है। वह आते ही दवाई देने का प्रयत्न नहीं करता है। बहुत से डाक्टर रोग को न जानकर दवाई देने में मूर्खता करते हैं। सच्चा डाक्टर महर्षि दयानन्द था। उन्होंने अपने आत्मिकवल द्वारा रोग के समस्त

कारणों को ढूंढ कर हमारा इलाज किया और हमारे दुःखों को दूर कर दिया। परन्तु हमारे दुर्भाग्य से वे अधिक काल तक यहां न रह सके।

हमने अछूतों के साथ दुर्व्यवहार किया और हमारे इस प्रकार के दुर्व्यवहार ने भारत का विनाश किया। हम लोग वैदिक धर्मावलम्बी होते हुए दुःखी हैं। देवता स्वरूप भाई परमानन्द जी के हृदयवेधी व्याख्यान को सुनकर आप लोगों को ज्ञात हो गया होगा कि हिन्दू जाति पर कितने अत्याचार किये जा रहे हैं। मैं आपकी सेवा में निवेदन करती हूँ कि हमें कारण ज्ञात हैं परन्तु हम उसका उपाय नहीं कर सकते। इसमें हमारे पूज्य गुरूजनों, माताओं एवं भाईयों का दोष नहीं हो सकता, इसमें तो हमारा ही दोष है हमारी कुरीतियां ही हमारे दोष हैं। सब से भयंकर कुरीति बाल-विवाह है। हमारी इच्छा है कि हमारी पुत्रियां और बहिनें मिशनरी स्त्रियों के समान हों। मैंने देखा है कि पिता की इच्छा होती है कि हमारा पुत्र देश और जाति की सेवा करे, परन्तु माता सभा सोसाइटियों में न जाने के कारण उसे शिक्षा नहीं दे सकती। अतः पिता की इच्छा पूर्ण नहीं हो पाती। अब संसार बदल गया। हमारे यहां के दुर्गुणों के कारण हमारे दिमाग़ कमज़ोर हैं। लोग कहते हैं कि भाइयो तुम बड़ों का कहना न मानकर बालकों का कहना क्यों मानते हो? आप एक हज़ार वर्ष पहले के बूढ़ों की आज्ञाओं पर ध्यान दें।

मै पंजाबी भाइयों और बहिनों का इस विषय पर विशेष ध्यान आकर्षण करना चाहती हूँ। यहाँ पर बड़ी-२ कांग्रेसें और कांफ्रेंसे हुईं और जनता को अछूतों को मिलाने के लिये उपाय बतलाये गये। क्या आपने उन उपायों पर अमल किया? पंजाब में स्यापा की बड़ी बुरी प्रथा वर्तमान है। इसमें बड़े दोष हैं। बदन को उघाड़ कर बाज़ारों में रोते हुए फिरना कहां की सभ्यता है। हाय-२ कर नाचना कहां की बुद्धिमत्ता है। ये दैविक नियम का उल्लंघन करती हैं। वेद की शिक्षा है जो ईश्वर ने किया है उसी पर सन्तुष्ट रहो। मैं अपनी पंजाबी माताओं और बहनों से निवेदन करती हूं कि वे इस कुप्रथा का परित्याग कर दें, नहीं तो सी०पी० और यू० पी० की स्त्रियां हम पर हंसेंगी।

राजाधिराज श्री सर नाहरसिंह जी वर्मा का आर्यकुमार सम्मेलन में भाषण

"आज दिन तक जितने अवतार, जितने आचार्य, जितने वीर, जितने सम्राट व लाट हुए हैं उन सबों ने अपने जीवन-काल की भावी उन्नति के साधनों को कुमारावस्था में प्राप्त किया है अतएव सभी अवस्थाओं में यह कुमारावस्था ही सर्वोत्तम है। कुमारगण ही देश, जाति वा धर्म के संरक्षक हैं। जिस देश व जाति के कुमार सदाचारी, विद्यानुरागी और सत्कर्मानुयायी होते हैं वह देश तथा जाति उन्नत होती है और इसके विपरीत बिगड़ जाती है। महर्षिवर श्री दयानन्द सरस्वती जी जब मुझपर कृपा करके शाहपुर पधारे थे तो उन्होंने मुझे यह बतलाया कि आर्यधर्म जो शिथिल हो चला है और देश दीनावस्था को पहुँच रहा है इसका मुख्य कारण एतद्देशीय कुमारों की दीनता है। इस देश में अब तक ब्रह्मचर्य-व्रत-पालन-परिपाटी, स्वाध्याय और सदाचार के नियम नहीं पाले जाते जिससे हमारा देश निर्बल, मूर्ख और धर्म हीन होता जा रहा है इसलिये देश, धर्म और जाति के कल्याणकारी आप कुमार ही हैं। वर्तमान काल में जो आपके वृद्ध नेता कार्य कर रहे हैं वे इस आशा पर कर रहे हैं कि हमारा कुमार-समूह तैयार हो रहा है, वह हमारे मस्तक का भार उतार लेगा। मैं आशा करता हूँ कि यह परिषद् उनकी आशा पूर्ण करेगी।

आर्यकुमार परिषद् क्या है? मेरी समझ में वह सच्चा आर्य बनने का सांचा है। इस परिषद् के द्वारा ही हम "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का सिद्धान्त पालन कर सकेंगे या यों समझिये कि यह वह नर्सरी है कि जिसमें आर्य कल्पतरू के पौधे पाले जाते हैं। मैं कुमार परिषद् के कुमारों से अनुरोध करता हूँ कि वे अपने पर बड़ी भारी ज़िम्मेदारी का काम उठा चुके हैं। उस कार्य को सिद्ध करने के लिए वेद भगवान् की आज्ञाओं का पालन कर ब्रह्मचर्य आदि महाव्रतों का पालन परमावश्यक है, क्योंकि कुमारवृन्द देश के भाग्य-निर्माण की समग्री हैं। ब्रह्मचर्य से धर्म कमाया जाता है। आयुर्वेद की नीती से सिद्ध है कि बिना ब्रह्मचर्य के शारीरिक दिव्य शक्ति प्राप्त नहीं होती और शारीरिक शक्ति के बिना

धर्म का साधन नहीं होता। कहा भी है "शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्" यह शरीर धर्म अर्थ काम मोक्षादि फलचतुष्टय के लिए होता है। इस लिए अखण्ड सुख प्राप्ति के लिए पहला सोपान ब्रह्मचर्याश्रम ही है।

"कुमारगण! आर्य संसार टकटकी लगाकर आपकी ओर देख रहा है। क्योंकि फूल मुरझाने वाले होते हैं और बीज में फलों की आशा रहती है। आप लोगों पर ही देश व धर्म के उद्धार का भार है। इसलिए आप लोग वीर बनें, सच्चे धर्मात्मा बनें, ब्रह्मचारी बनें, परोपकारी बनें और आपकी भावी सन्तानें भारत का मुख उज्ज्वल करने वाली हों। उनके द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार हो और विश्वमत्र का उपकार हो।"

स्वामी जी के समकालीन पुरूषों के दर्शन और भाषण

शाहपुराधीश राजाधिराज सर नाहरसिंह जी ने दर्शन दिये और कहा कि:-

वहिनो और भाइयो !

मैं जो कुछ आपके सामने निवेदन करूंगा वह मेरे जीवन की दो चार घटनायें हैं। मैं बचपन में एक छोटे से गांव में रहा करता था। जव शाहपुराधीश का स्वर्गवास हुआ तव मैं १४ वरस की आयु में गद्दी पर वैठाया गया। गवर्नमेंट ने मेरा एक शिक्षक नियुक्त किया जो छटा हुआ ईसाई था। उसकी संगति से मैं ईसाई तो नहीं, पर नास्तिक हो गया। वहुत दिनों तक नास्तिक रहा और तव स्वामी दयानन्द जी से चित्तौड़ में भेंट हुई। मेरा ख्याल हुआ कि स्वामी जी मेरी शंका का समाधान कर सकते हैं और वस्तुतः उनकी सेवा में शंकायें प्रकट करने पर उन्होंने सब का उचित समाधान कर दिया। ब्रह्मा जी अपनी वेटी से फंस गये, इसका अभिप्राय स्वामी जी ने यह वतलाया कि विद्या ब्रह्मा की वेटी है और वह विद्या में लीन हो गये। इसके बाद मेरी श्रद्धा स्वामी जी में हो गई। फिर स्वामी जी के दर्शन मुझे उदयपुर में हुये। वहां कई वार प्रार्थना करने पर वह शाहपुर पधारे। मैंने उनसे शाहपुर में पातंजल योगसूत्र पढ़ना शुरू किया। प्रातःकाल मैं उनके साथ वायु सेवनार्थ जंगल में जाया करता था। वहां वह स्वयं प्राणायाम करते तथा मुझे भी सिखलाया करते थे।

रावराजा तेजसिंह जी (जोधपुर)

रावराजा साहब ने एक चित्र दिखला कर कहा कि यह स्वामी जी का चित्र मैंने स्वयं उनकी आज्ञा से लिया था। यह हर समय महाराजा के सोने के कमरे में लगा रहता था। वह अपने सब अफ़सरों से कहा करते थे कि यह मेरे गुरू हैं। जब तक जोधपुर का नाम रहेगा तब तक हम इस चित्र के दर्शन करते रहेंगे। मैंने एक पुस्तक में पढ़ा है कि स्वामी जी नसवार (हुलास) सूघां और पान खाया करते थे। यह ठीक नहीं है। स्वामी जी जब जोधपुर आये तब उन्होंने लोगों को कई बार ऐसा करने से यह कह कर मना किया कि तुम्हारी नाक गंदी नाली की तरह चल रही है। यह बात उस पुस्तक से तुरन्त निकाल दी जानी चाहिये। स्वामी जी पान नहीं खाते थे। हां, पान पर रख कर ब्रह्मी बूटी खाते थे। हम को भी कई बार खिलाई थी। यह बड़ी गुणकारी औषधि है। इस औषधि को ही पान बताया जा रहा है। हमने कभी स्वामी जी को पान खाते नहीं देखा। तम्बाकू की तो बात ही क्या? तम्बाकू को तो वह राज्य से ही निकलवा देना चाहते थे। बीमारी के समय डाक्टर सूरजबल ने कहा कि मैं आपको क्लोरोडाइन देना चाहता हूँ और बताया कि उसमें अफ़ीम पड़ती है। तब आपने कहा कि कदापि नहीं, प्राण चले जांय पर मादक द्रव्य का सेवन कभी न करूंगा। इसके बाद रावराजा तेजसिंह जी ने स्वामी जी के लिखे पांच पत्र पढ़ कर सुनाये, जिनमें प्रजा-पालन, देशभक्ति और सदाचार आदि का उपदेश दिया हुआ था। पत्रों में भारतीय राजाओं को अपने देश की उन्नति का सदा ध्यान रखने की विशेषत: प्रेरणा की गई थी। पत्र सुना चुकने पर राव-राजा साहब ने कहा कि वह भी दिन था जब कि स्वामी जी महाराज जोधपुर आ रहे थे। पाली से घोड़ा आदि उनकी सवारी के लिए न मिला और पैदल चल कर आये। महाराजा जोधपुर ने मुझे आज्ञा दी कि तुम जाओ। महाराज की मुझ पर बड़ी कृपा थी, यह सब स्वामी जी का प्रताप था। मैं जिस समय जा रहा था कि एक दिव्य मूर्ति, जिसे मैंने पहले कभी न देखा था, सामने अकेली आ रही थी। मैंने अपने भाई से पूछा कि यह कौन है? यह तो

पहाड़ का पहाड़ चला आ रहा है। जब यह समीप आये तो मेरे पांव ज़मीन पर चिपट गये। उनकी साठ बासठ वर्ष की आयु का यह हाल था कि उनका चेहरा सुर्ख था और इस प्रकार चमकता था कि उसकी ओर देखने की हिम्मत न होती थी। जब महाराज स्वामी जी से मिले तो स्वामी जी इस तपाक से मिले कि घर जाकर मेरे भाई ने मुझे अपनी भुजायें दिखाई जिन पर स्वामी जी के हाथ घिस गए थे और निशान पड़ गये थे। मुझे अपने भाई के समान बलिष्ठ उस समय कोई न दिखाई देता था। मैं जिस पदक को धारण किए हुए हूँ यह स्वामी जी का चित्र है और हाथी दांत के ऊपर बनाया गया है। महाराजा जोधपुर ने तीन सौ रूपये व्यय करके यह पदक तय्यार कराया था जो मुझे मेरी सेवाओं के उपलक्ष्य में दिया गया है।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज

मैं नहीं चाहता था कि मेरा नाम इस सम्बन्ध में लिया जाता। मैंने ऋषि दयानन्द के सम्बन्ध में सुना और उनके दर्शन भी किए हैं। परन्तु मैं वह सब कुछ प्रकाशित कर चुका हूं। पहली बात जो मुझे इस समय याद आई है वह यह है कि काशी में मेरे पिता पुलिस अफसर थे। मैं वहां पढ़ता था। ऋषि जी वहां पधारे हुए थे। प्रसिद्ध था कि एक नास्तिक जादूगर आया हुआ है। वह दिन में दो मशालें रोशन किये रखता है। मेरी माता ने हम बच्चों का घर से निकलना बन्द कर दिया कि कहीं मेरे बच्चे इस जादूगर के कब्ज़े में न आ जायं। परन्तु उन्हें क्या मालूम था कि उनका बच्चा एक दिन जादूगर के कब्जे में हो जायगा। १८७६ ई० में बरेली में पण्डित दयानन्द सरस्वती का आना प्रसिद्ध हुआ। वह आकर ख़ज़ान्ची लक्ष्मीनारायण की कोठी पर ठहरे। मैं उन दिनों कट्टर नास्तिक था। पिता जी ने कहा कि एक दंडी स्वामी आये हैं, तुम चलो। मैंने समझा कि दंडी स्वामी संस्कृत पढ़ा हुआ है। सिवाय मूर्खता के और क्या बातें करता होगा। मैं पिताजी के साथ गया। स्वामी जी कुर्सी पर बैठे थे। मैं पहले तो उनकी मूर्ति को देखकर आश्चर्य में पड़ गया परन्तु

दो पादरियों को देख कुछ शान्ति हुई। भाव जो मन में आया, वह यह था कि यह केवल संस्कृत पढ़ कर ऐसी बुद्धि की बातें करता है, आश्चर्य है? मैंने उनसे कहा कि अब टाऊनहाल में व्याख्यान का प्रवन्ध हो गया है। स्वामी जी वहां गए और ईश्वर स्तुति पर व्याख्यान दिया। फिर ओ३म् नमस्ते और मूर्ति-खण्डन पर लेक्चर हुआ। इससे मेरे पिता बहुत अप्रसन्न हुये। पिता की श्रद्धा घटी और नास्तिक की श्रद्धा बढ़ी। ऋषि दयानन्द का दो घंटे दरबार हुआ करता था। इससे सब लोग आया करते थे और प्रश्नोत्तर हुआ करते थे। मैंने लोगों से पूछा कि स्वामी जी ईश्वरोपासना किस समय करते हैं तो मालूम हुआ कि वे तड़के ४ बजे कहीं चले जाते हैं और प्रातःकाल ६।। बजे वापिस आते हैं और उसी समय सन्ध्योपासना कर आते हैं। एक दिन मैंने स्वामी जी से कहा कि आप बड़े हाज़िर जबाव हैं जो लोगों का मुंह बन्द कर देते हैं परन्तु मुझे ईश्वर पर विश्वास आपनें नहीं दिलाया। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि जब प्रभु की कृपा होगी तब आप को ईश्वर पर विश्वास होगा। उस दिन मैं चुप हो गया। १५ बरस बीतने पर समय आया कि उसी प्रभु ने अपने ऊपर मेरा विश्वास दृढ़ किया।

श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी

श्री स्वामी जी ने दर्शन देत हुए कहा, कि स्वामी दयानन्द जी का हरिद्वार में काली कमली वाले महात्मा विशुद्धानन्द के साथ विवाद हुआ था। उसका मुझ पर अधिक प्रभाव पड़ा। मैंने तभी से अपना जीवन उनके उपदेशानुसार ढालना आरम्भ कर दिया। मैंने महर्षि से बहुत सी शंकाओं का समाधान भी किया था। उनमें वस्तुतः वर्णनातीत विद्युतशक्ति विद्यमान थी।

श्री स्वामी अच्युतानन्द जी

स्वामी जी स्वयं उनसे टक्कर लेने वालों में से एक थे परन्तु अव वे अपनी महन्त की गद्दी का परित्याग किए हुए आर्य संन्यासी हैं। स्वामी जी ने स्वामी दयानन्द सरस्वती जी से "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" पर शास्त्रार्थ किया था। जिस पर महर्षि ने इसकी व्याख्या की थी कि यह वाक्य अद्वैतपरक नहीं है वरन् "अद्वितीयः पंडितः" के समान ब्रह्म की अद्वितीयता मात्र का द्योतक है। ब्रह्म के समान दूसरा कोई महान् शक्ति वाला प्रभु नहीं है यही इसका अर्थ है।

श्री पंडित आर्य मुनि जी

पंडित जी ने उठकर कहा कि जब महर्षि से शास्त्रार्थ करने के लिए नैयायिक वेदान्ती आते थे, तब वे बराबर नवीन न्याय की अवच्छेदकता प्रकारता की लम्बी-२ पंक्तियां बोल कर स्वामी जी को परास्त करना चाहते थे। परन्तु महर्षि उनसे पूछते थे कि यह किस वेद में लिखा है? बस, इस पर पण्डितों के मुख पर ताले लग जाया करते थे।

रायसाहिब श्री हरविलास जी शारदा

रायसाहिब श्री हरविलास जी शारदा, मन्त्री परोपकारिणी सभा, ने एक कहानी सुनाई कि व्याख्यान देने के उपरान्त एक बार हाल का विशाल दरवाजा ऐसा बन्द हो गया कि बहुत ज़ोर लगाने पर भी न खुला। अन्त में स्वामी जी ने बड़ी सुगमता से खोल दिया।

श्री लाला देवराज जी

लाला देवराज जी ने कहा कि मैं हिन्दू धर्म को बहुत कच्चा समझता था। मेरे उस्ताद मुझे मुसलमानी धर्म सिखाते थे। स्वामीजी का व्याख्यान सुनकर मैं अपने धर्म पर पक्का हो गया। मैंने अपने उस्ताद से प्रश्न करने शुरू कर दिये। वह चुप साध गया।

श्री लाला लक्ष्मणानन्द जी

लाला लक्ष्मणानन्द जी ने कहा कि स्वामी जी सम्वत् १६३४ में गुरूदासपुर में आये थे। उनके व्याख्यानों को सुनकर सब पंडित दंग थे। गावों तक में यह फैल गया था कि इस साधु को यक्खनी सिद्ध है, इससे इसकी आवाज मीलों तक जाती है। स्वामी कहा करते थे कि एक स्त्री ही एक पुरूष के लिए है।

महात्मा श्री अलखधारी जी (अम्बाला)

महात्मा अलखधारी जी (अम्बाला) ने स्वामी जी के दर्शन लार्डलिस्टन की गवर्नरशिप में किये थे। उन्होंने कहा, कि मैं सोरों में ईसाई होने वाला था, मेरे भाई मर चुके थे। मेरे चाचा मुझे स्वामी जी के पास ले गये। मैं ईसाई न बना। सन् १८७४ के साल में स्वामी जी के विषय की चर्चा पार्लियामेंट में भी हुई थी। उस समय के विवरण निकाल कर देख लेने चाहियें। एक वायसराय ने भी स्वामी जी के बाबत अपने डिस्पेच में लिखा था।

म० श्री गणेशप्रसाद जी (जलालपुर)

म० गणेशप्रसाद जी ने कहा मैं शिव के ११ लिंग पूजता था, परन्तु स्वामी जी के सत्योपदेश को श्रवण करके मैंने सब चट्टे बट्टे फेंक दिये।

श्री लाला गंगाराम जी (लाहौर)

लाला गंगाराम जी लाहौर वालों ने बतलाया कि मैं मुसलमान होने लगा था। साथ ही लाला लाजपतराय भी मुसलमान होने वाले थे। स्वामी जी के प्रभाव और उपदेशों ने हमें बचा लिया।